भूमिका।

क्या आज इस भारत वर्ष में कोई हिन्दू मात्र ऐसा भी है जिसको श्रीमद्गोस्वामी तुलसीदास जी के वाक्य में प्रेम न हो या जिसने उनकी वनाई रामायण न देखी हो-आज इस भूमण्डल पर ऐसी कोई ही भाषा होगी जिसमें तुलसीकृत रामायण का अनुवाद न हुआ हो-इसका कारण यही प्रतीत होता है कि ऐसी कोई फिलासोफी नहीं है जो इस अपूर्व ग्रंथ में न हो और न ऐसा कोई विषय है जिस पर इस ग्रंथ में कुछ उपदेश वाक्य न मिलें परन्तु वे सब एकही जगह पर नहीं हैं, एक वाक्य कहीं है दूसरा वाक्य उसी विषय पर कहीं दूसरी जगह है इस कारण साधारण मनुष्यों, स्त्रियों और वालकों को कण्ठस्थ नहीं रहतेहैं। इस लिये एक २ विषयपर जो २ वाक्य जहां २ मिले वह सब चुनकर एकत्रित किये गए हैं ताकि छोटे २ लड़के और लड़कियां भी सुगमता से कण्ठ कर लेवें-इस वात के कहने की कोई आवश्यकता नहीं है कि अभी सैकड़ों हजारों रत्न ऐसे होंगे कि जो इसमें से छूट गए होंगे अतः पाठकगणों से सविनय प्रार्थना है

कि उनकी समझ में जो कोई वाक्य श्रीमत् रामायण के इस पुस्तक में और होना चाहियें उनको हमें सूचित करते रहें ताकि द्वितीयावृत्ति में वह भी शामिल कर दिए जावें इस कृपा के हम अनेकानेक धन्यवाद देंगे।

वारम्वार प्रार्थना यह है जिन महाशयों के हाथ में यह पुस्तक पहुँचे वह इस को कम से कम एक बार तो अवश्य ही आद्योपांत पढ़ें ताकि हमारा थोड़ा सा श्रम और बहुत बड़ी आशा सफल हो।

इस संग्रह में प्रायः पाठ इन्डियन प्रेस (इलाहाबाद) की छपी रामायण से लियाहै जो तुलसीदासजी महाराजके निज हाथ की लिखी हुई रामायण से शुद्ध की गई है।

लखनऊ
श्रावण शुक्ल १५
संवत् १९६४

कन्हैयालाल,
रघुनन्दनप्रसाद व
परमेश्वरीदास

———:*:०:*:———

विषयानुक्रमणिका

विषय	पत्र

——:o:——

राम राम राम
राम शिव उवाच राम
राम राम राम राम राम
राम रामेति रामेति
रमे रामे मनोरमे
सहस्रनाम तत्तुल्यं
रामनाम वरानने १

मंगलाचरण तथा गुरु वन्दना ॥

श्लोकाः

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि ।
मंगलानां च कर्तारौ वंदे वाणीविनायकौ ॥ १ ॥
भवानीशंकरौ वंदे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाःस्वांतःस्थमीश्वरम्॥२॥

वंदे बोधमयं नित्यं गुरुं शंकररूपिणम् ।
यमाश्रितोहि वक्रोऽपि चन्द्रः सर्वत्रवंद्यते ॥ ३ ॥
सीतारामगुणग्रामपुण्यारण्यविहारिणौ ।
वंदे विशुद्धविज्ञानौ कवीश्वर कपीश्वरौ ॥४॥
उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेशहारिणीम् ।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम् ॥ ५ ॥
यन्मायावशवर्त्तिविश्वमखिलं ब्रह्मादिदेवाः सुरा ।
यत्सत्त्वादमृषैवभातिसकलं रज्जौयथाहेर्भ्रमः ॥
यत्पादप्लवमेकमेवहिभवांभोधेस्तितीर्षावतां ।
वंदेऽहं तमशेषकारणपरं रामाख्यमीशं हरिम् ॥ ६ ॥

नानापुराण निगमागमसम्मतं यद्रामायणे निगदितं क्वचि-दन्यतोऽपि । स्वांतः सुखाय तुलसीरघुनाथगाथाभाषा निबंधमति मंजुलमातनोति ॥ ७ ॥

सोरठा ॥

जेहि सुमिरत सिधि होइ, गणनायक करि-वर-वदन ।
करउ अनुग्रह सोइ, बुद्धिरासि सुभ-गुन-सदन ॥ १ ॥
मूक होइ बाचाल, पंगु चढ़इ गिरिवर गहन ।
जासु कृपा सो दयाल, द्रवउ सकल-कलि-मल-दहन॥२॥

नील-सरोरुह-स्याम, तरुन-अरुन-वारिज-नयन।
करउ सो मम उर धाम, सदा छीर-सागर सयन ॥३॥
कुंद—इंदु—सम देह, उमारमन करुना अयन।
जाहि दीन पर नेह, करउ कृपा मर्दन मयन॥ ४॥
बंदउँ गुरु-पद-कंज, कृपासिंधु नररूप हरि।
महा-मोह-तम-पुंज, जासु वचन रबि-कर निकर॥ ५॥

चौपाई॥

बंदउँ गुरु-पद-पदुम-परागा। सुरुचि सुवास सरस अनुरागा॥
अमिय-मूरि-मय चूरन चारू। समन सकल-भव-रुज-परिवारू॥
सुकृत संभुतन विमलविभूती। मंजुल मंगल—मोदप्रसूती॥
जन-मन-मंजु-मुकुर-मल-हरनी। किएतिलकगुनगनबसकरनी॥
श्रीगुरु-पद-नख-मनि-गन-जोती। सुमिरत दिव्य दृष्टि हिय होती॥
दलन मोह तम सोसु प्रकासू। बड़े भाग उर आवइ जासू॥
उघरहिं बिमल बिमोचन ही के। मिटहिं दोष दुख भव रजनी के॥
सूझहिं राम चरित मनि मानिक। गुपुतप्रगटजहँजोजेहिखानिक॥

दोहा॥

जथा सुअंजन अंजि दृग, साधक सिद्धि सुजान।
कौतुक देखहिं सैल बन, भूतल भूरि निधान॥ १॥

श्रीरामस्तुति

सोरठा।

प्रभु आसन आसीन, भरि लोचन सोभा निरखि।
मुनिवर परम प्रवीन, जोरि पाणि अस्तुति करत॥

छन्द॥

नमामि भक्तवत्सलं कृपालु शील कोमलम्।
भजामि ते पदाम्बुजं अकामिनां स्वधामदम्॥
निकामश्याम सुंदरं भवाम्बुनाथ मन्दरम्।
प्रफुल्लकंज लोचनं मदादि दोष मोचनम्॥ १॥

प्रलम्बबाहु विक्रमं प्रभोऽप्रमेय वैभवम्।
निषंगचापसायकं धरं त्रिलोकनायकम्॥
दिनेशवंशमण्डनं महेशचापखण्डनम्।
मुनीन्द्र सन्त रंजनं सुरारि वृन्द भंजनम्॥ २॥

मनोजवैरिवन्दितं अजादि देव सेवितम्।
विशुद्धबोध विग्रहं समस्त दूषणापहम्॥
नमामि इन्दिरापतिं सुखाकरं सतांगतिम्।

भजे सशक्ति सानुजं शचीपति प्रियानुज ॥ ३ ॥
त्वदंघ्रि मूल ये नरा भजन्ति हीन मत्सराः ।
पतन्ति नो भवार्णवे वितर्क वीचि संकुले ॥
विविक्त वासिनस्सदा भजन्ति मुक्तये मुदा ।
निरस्य इन्द्रियादिकं प्रयान्ति ते गतिं स्वकाम् ॥ ४ ॥
त्वमेक मद्भुतं प्रभुं निरीहमीश्वरं विभुम् ।
जगद्गुरुं च शाश्वतं तुरीयमेव केवलम् ॥
भजामि भाव वल्लभं कुयोगिनां सुदुर्लभम् ।
स्वभक्त कल्प पादपं समं सु सेव्य मन्वहम् ॥५॥
अनूप रूप भूपतिं नतोऽहं मुर्निजापतिम् ।
प्रसीद मे नमामि ते पदाब्जभक्ति देहि मे ॥
पठन्ति ये स्तवं इदं नरादरेण ते पदम् ।
व्रजन्ति नात्र संशय स्त्वदीयभक्ति संयुताः ॥६॥

दोहा ॥

विनती करि मुनि नाइ सिर, कह कर जोरि बहोरि ।
चरण सरोरुह नाथ जनि, कबहुँ तजइ मति मोरि ॥

——;o;——

श्रीशिवस्तुति ।

छन्द भुजङ्गप्रयात ॥

नमामीश मीशान निर्वाणरूपम् । विभुं व्यापकं ब्रह्म वेदस्वरूपम् ॥
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहम् । चिदाकाश माकाश वासं भजेहम् ॥
निराकार मोंकार मूलं तुरीयम् । गिराज्ञान गोतीत मीशं गिरीशम् ॥
करालं महाकाल कालं कृपालम् । गुणागार संसार पारं नतोऽहम् ॥
तुषाराद्रि संकाश गौरं गभीरम् । मनोभूत कोटि प्रभा श्रीशरीरम् ॥
स्फुरन्मौलि कल्लोलिनी चारुगंगा । लसद्भाल वालेन्दु कंठेभुजंगा ॥
चलत्कुण्डलं शुभ्रनेत्रं विशालम् । प्रसन्नाननं नीलकण्ठं दयालम् ॥
मृगाधीश चर्माम्वरं मुण्डमालम् । प्रियं शंकरं सर्वनाथं भजामि ॥
प्रचण्डं प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशम् । अखण्डं अजं भानुकोटि प्रकाशम् ॥
त्रयीशूल निर्मूलनं शूलपाणिम् । भजेहं भवानीपतिं भाव गम्यम् ॥
कलातीत कल्याण कल्पान्तकारी । सदा सज्जनानन्ददाता पुरारी ॥
चिदानन्द सन्दोह मोहापकारी । प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी ॥
न यावद् उमानाथ पादारविन्दम् । भजंतीह लोकेपरे वा नराणाम् ॥

न तावत् सुखं शांति सन्तापनाशम्। प्रसीद प्रभो सर्व भूताधिवासिम् ॥
न जानामि योगं जपं नैव पूजाम्। नतोहं सदा सर्वदा शम्भु तुभ्यम् ॥
जराजन्म दुःखौघतातप्यमानम्। प्रभो पाहि आपन्नमामीश शंभो॥

श्लोकः ।

रुद्राष्टक मिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतोषये ।
ये पठन्ति नरा भक्त्या तेषां शम्भुः प्रसीदति ॥१॥

शिवभक्ति ।

चौपाई ॥

इच्छित फल विनु शिव आराधे । लहइ न कोटि योग जप साधे ॥

शिवपद कमल जिनहिं रति नाहीं । रामहिं ते सपनेहु न सुहाहीं ॥

बिनु छल विश्वनाथ पद नेहू । राम भक्त कर लक्षण एहू ॥

जेहि पर कृपा न करहिं पुरारी । सो न पाव मुनि भक्ति हमारी ॥

शंकर विमुख भक्ति चह मोरी । सो नर मूढ़ मंदमति थोरी ॥

दोहा ।

अउरउ एक गुपुत मत । सबहिं कहउं करजोरि ॥
शंकर भजन विनानर । भगति न पावइ मोरि ॥
शंकर प्रिय मम द्रोही । शिवद्रोही मम दास ॥
तेनर करहिं कल्प भरि । घोर नरक महं वास ॥

——:*:*:——

गुरु, माता, पिता और स्वामी की सेवा ।

दोहा ।

मातु पिता गुरु स्वामि शिख । शिर धरि करिय सुभाय ॥
लहेउ लाभ तिन जन्म करि । नतरु जन्म जग जाय ॥

चौपाई ।

गुरु पितु मातु स्वामि शिख पालैं । चलत सुमगु पगु परत न खालैं ॥
मातु पिता गुरु प्रभुकी वानी । विनहिं विचार करिय शुभजानी ॥
गुरु पितु मात स्वामि हित वानी । सुनिमनमुदित करियभलजानी ॥
उचित कि अनुचित किये विचारू । धर्म जाइ शिर पातक भारू ॥
गुरु पितु मातु बंधु सुर सांई । सेइय सकल प्रान की नांई ॥
गुरु के वचन प्रतीत न जेही । सपनेहु सुगम न सुख सिधि तेही ॥
गुरु बिनु भव निधि तरै न कोई । जौं विरंचि शंकर सम होई ॥

दोहा ।

संत कहहिं अस नीति प्रभु । श्रुति पुराण जो गाव ॥
होइ न विमल विवेक उर । गुरु सन किये दुराव ॥

सहज सुहृदगुरु स्वामि शिख । जो न करै शिर मानि ॥
सो पछताइ अघाइ उर । अवशि होइ हित हानि ॥

चौपाई ।

जे शठ गुरु सन ईर्षा करहीं । रौरव नरक कल्प शत परहीं ॥
तिर्यक योनि पुनि धरहिं शरीरा । अयुत जन्म भरि पावहिं पीरा ॥

—:०:—

ब्राह्मणसेवा।

—:❋:—

दोहा।

मन क्रम वचन कपट तजि। जो कर भूसुर सेव।
मोहि समेत विरंचि शिव। वश ताके सब देव॥
सगुण उपासक परम हित। निरत नीति दृढ़नेम।
ते नर प्राण समान मम। जिनके द्विज पद प्रेम॥

चौपाई॥

विप्र वंश की अस प्रभुताई। अभय होइ जो तुमहिं डराई।
शापत ताड़त पुरुष कहंता। विप्र पूज्य अस गावहिं संता॥
पूजिय विप्र शील गुण हीना। शूद्र न गुण गण ज्ञान प्रवीना॥
पुन्य एक जगमहं नहिं दूजा। मन क्रम वचन विप्र पद पूजा॥
सानुकूल तेहि पर मुनि देवा। जो तजि कपट करइ द्विज सेवा॥

—:❋:❋:—

रामगीता ।

(श्रीरघुनाथजी का प्रजाके प्रति सदुपदेश

तथा

मनुष्य शरीर का कर्त्तव्य)

—:०:—

चौपाई ॥

एकबार रघुनाथ बोलाये । गुरु द्विज पुरवासी सब आये ॥
बैठे सदसि अनुज मुनि सज्जन । बोले वचन भगत-भय-भंजन ॥
सुनहु सकल पुरजन मम बानी । कहउँ न कछु ममता उर आनी ॥
नहिं अनीति नहिं कछु प्रभुताई । सुनहु करहु जो तुम्हहिं सुहाई ॥
सोइ सेवक प्रियतम मम सोई । मम अनुसासन मानइ जोई ॥
जौं अनीति कछु भाषउँ भाई । तौ मोहिं बरजहु भय बिसराई ॥
बड़े भाग मानुष तनु पावा । सुर दुर्लभ सत्र ग्रंथन्हि गावा ॥
साधन धाम मोच्छ कर द्वारा । पाइ न जेहिं परलोक सँवारा ॥

दोहा ॥

सो परत्र दुख पावइ, सिर धुनि धुनि पछिताइ ।
कालहि कर्महि ईस्वरहि, मिथ्या दोष लगाइ ॥

चौपाई।

एहि तन कर फल विषय न भाई। स्वरगउ स्वल्प अंत दुखदाई॥
नर तनु पाइ विषय मन देहीं। पलटि सुधा ते सठ विष लेहीं॥
ताहि कबहुँ भल कहइ न कोई। गुंजा ग्रहइ परसमनि खोई॥
आकर चारि लच्छ चौरासी। जोनिभ्रमत यहजिवअविनासी॥
फिरत सदा माया कर प्रेरा। काल कर्म सुभाव गुन घेरा॥
कबहुँक करि करुना नर देही। देत ईश बिनु हेतु सनेही॥
नरतन भववारिधि कहुँ बेरो। सनमुख मरुत अनुग्रह मेरो॥
करनधार सदगुरु दृढ़ नावा। दुर्लभ साज सुलभ करि पावा॥

दोहा।

जो न तरइ भवसागर, नर समाज अस पाइ।
सो कृत निंदक मंदमति, आतम-हन-गति जाइ॥

चौपाई॥

जौं परलोक इहाँ सुख चहहू। सुनि मम वचन हृदय दृढ़ गहहू॥
सुलभ सुखद मारग यह भाई। भगति मोरि पुरान श्रुति गाई॥
ज्ञान अगम प्रत्यूह अनेका। साधन कठिन न मन कहँ टेका॥
भगति सुतंत्र सकल सुख खानी। बिनु सतसंग न पावहिं प्रानी॥
पुन्यपुंज बिनु मिलहिं न संता। सतसंगति संसृति कर अंता॥

पुन्य एक जग महँ नहिं दूजा। मन क्रम बचन बिप्र पद पूजा॥
सानुकूल तेहि पर मुनि देवा। जो तजि कपट करइ द्विज सेवा॥

दोहा।

अउरउ एक गुपुत मत, सबहिं कहउँ करजोरि।
संकर भजन बिना नर, भगति न पावइ मोरि॥

चौपाई।

कहहु भगति पथ कवन प्रयासा। जोग न मख जप तप उपवासा॥
सरल सुभाव न मन कुटिलाई। जथा लाभ संतोष सदाई॥
मोर दास कहाइ नर आसा। करइ त कहहु कहा बिस्वासा॥
बहुत कहउँ का कथा बढ़ाई। एहि आचरन बस्य मैं भाई॥
बयरु न बिग्रह आस न त्रासा। सुखमय ताहि सदा सब आसा॥
अनारंभ अनिकेत अमानी। अनघ अरोष दच्छ बिज्ञानी॥
प्रीति सदा सज्जन संसर्गा। तृन सम बिषय स्वर्ग अपबर्गा॥
भगति पच्छ हठ नहिं सठताई। दुष्ट तर्क सब दूरि बहाई॥

दोहा।

मम गुनग्राम नाम रत, गत-ममता-मद-मोह।
ता कर सुख सोइ जानइ, परानन्द संदोह॥

चौपाई।

सुनत सुधासम बचन राम के। गहे सबनि पद कृपाधाम के॥

इति रामगीता समाप्ता॥

विषय भोगकी तुच्छता ।

—*:o:*—

चौपाई ॥

सुनहु उमा ते लोग अभागी । हरि तजि होहिं विषय अनुरागी ॥
एहि तनु धरि हरि भजहिं न जे नर । होहिं विषयरत मंद मंदतर ॥
कांच किरिच बदले जिमि लेहीं । कर ते डारि परसमनि देहीं ॥
एहि तन कर फल विषय न भाई । स्वरगउ स्वल्प अंत दुखदाई ॥
नर तनु पाइ विषय मन देहीं । पलटि सुधा ते सठ विष लेहीं ॥
ताहि कबहुँ भल कहइ न कोई । गुंजा ग्रहइ परसमनि खोई ॥
नाथ विषय सम मद कछु नाहीं । मुनि मन मोह करै क्षण माहीं ॥
जानिअ तबहिं जीव जग जागा । जब सब विषय बिलास बिरागा ॥

—:*:—

संगति का गुण ।

—:०:—

दोहा ।

विनु सत संग न हरि कथा । तेहि विनु मोह न भाग ॥
मोह गए विनु राम पद । होइ न दृढ़ अनुराग ॥

चौपाई ।

विनु सत संग विवेक न होई । राम कृपा विनु सुलभ न सोई ॥
शठ सुधरहिं सत संगति पाई । पारस परसि कुधातु सुहाई ॥

दोहा ।

तात स्वर्ग अपवर्ग सुख । धरिय तुला इक अंग ॥
तुलै न ताहि सकल मिलि । जो सुख लव सत संग ॥

चौपाई ।

विधि वश सुजन कुसंगतिपरहीं । फणिमणिसमनिजगुणअनुसरहीं ॥
गगन चढ़ै रज पवन प्रसंगा । कीचड़ मिलइ नीच जल संगा ॥
साधु असाधु सदन शुक सारी । सुमिरहिं राम देहिं गण गारी ॥
धूम कुसंगति कारिख होई । लिखिय पुराण मंजु मसि सोई ॥
धूमहु तजै सहज करुआई । अगर प्रसंग सुगंध बसाई ॥

सोइ जल अनल-अनिल संघाता । होइ जलद जग जीवन दाता ॥

दोहा।

ग्रह भेषज जल पवन पट, पाइ कुयोग सुयोग ॥
होइ कुवस्तु सुवस्तु जग, लखहिं सुलक्षण लोग ॥

—:o:—

संत और असंतों के लक्षण।

—:o:—

चौपाई।

सुनु मुनि संतन के गुन गाऊं। जिन्हतें मैं उन के बस रहऊं ॥
षट विकार जित अनघ अकामा। अचल अकिंचन सुचि सुखधामा ॥
अमित बोध अनीह मित भोगी। सत्यसंध कवि कोविद जोगी ॥
सावधान मानद मदहीना। धीर भगतिपथ परम प्रवीना ॥

दोहा।

गुनागार संसार दुख, रहित विगत संदेह।
तजि मम चरन सरोज प्रिय, जिन्ह कहुँ देह न गेह ॥

चौपाई।

निज गुन स्रवन सुनत सकुचाहीं। परगुन सुनत अधिक हरषाहीं ॥
सम सीतल नहिं त्यागहिं नीती। सरल सुभाव सबहिं सन प्रीती ॥
जप तप व्रत दम संयम नेमा। गुरु–गोविन्द–विप्र–पद–प्रेमा ॥
स्रद्धा छमा मइत्री दाया। मुदिता मम पद प्रीति अमाया ॥
बिरति विवेक विनय विज्ञाना। बोध जथारथ बेद पुराना ॥
दंभ मान मद करहिं न काऊ। भूलि न देहिं कुमारग पाऊ ॥

गावहिं सुनहिं सदा मम लीला । हेतु रहित पर-हित-रत-सीला ॥
सुनु मुनि साधुन के गुन जेते । कहि न सकहिं सारद स्रुति तेते ॥
संत असंत भेद बिलगाई । प्रनतपाल मोहि कहहु बुझाई ॥
संतन्ह के लच्छन सुनु भ्राता । अगनित स्रुति पुरान बिख्याता ॥
संत असंतन्ह कै असि करनी । जिमि कुठार चंदन आचरनी ॥
काटय परसु मलय सुनु भाई । निज गुन देइ सुगंध बसाई ॥

दोहा ।

तातें सुर सीसहु चढ़त, जगवल्लभ श्रीखंड ।
अनल दाहि पीटत घनहिं, परसुबदन यह दंड ॥

चौपाई ।

बिषय अलंपट सीलगुनाकर । परदुख दुख सुख सुख देखे पर ॥
सम अभूतरिपु बिमद बिरागी । लोभामरष हरष भय त्यागी ॥
कोमल चित दीनन्ह पर दाया । मन बच क्रम मम भगति अमाया ॥
सबहिं मान प्रद आपु अमानी । भरत प्रानसम मम तें प्रानी ॥
बिगतकाम मम नाम परायन । सांति बिरति बिनती मुदितायन ॥
सीतलता सरलता मइत्री । द्विज-पद-प्रीति धरम जनयित्री ॥
ये सब लच्छन बसहिं जासु उर । जानहु तात संत संतत फुर ॥
सम दम नियम नीति नहिं डोलहिं । परुष बचन कबहूँ नहिं बोलहिं ॥

दोहा ।

निंदा अस्तुति उभय सम, ममता मम पद कंज ।
ते सज्जन मम प्रानप्रिय, गुन मंदिर सुख पुंज ॥

चौपाई ।

सुनहु असंतन्ह केर सुभाऊ । भूलेहु संगति करिय न काऊ ॥
तिन्ह कर संग सदा दुखदाई । जिमि कपिलहि घालइ हरहाई ॥
खलन्ह हृदय अति ताप बिसेखी । जरहिं सदा पर संपति देखी ॥
जहँ कहुँ निंदा सुनहिं पराई । हरषहिं मनहुँ परी निधि पाई ॥
काम-क्रोध-मद–लोभ–परायन । निर्दय कपटी कुटिल मलायन ॥
बयरु अकारन सब काहू सों । जो कर हित अनहित ताहू सों ॥
झूठइ लेना झूठइ देना । झूठइ भोजन झूठ चबेना ॥
बोलहिं मधुर बचन जिमि मोरा । खाहिं महा अहि हृदय कठोरा ॥

दोहा ।

परद्रोही पर–दार–रत, पर धन पर अपवाद ।
ते नर पावँर पापमय, देह धरे मनुजाद ॥

चौपाई ।

लोभइ ओढन लोभइ डासन । सिस्नोदर पर जम–पुर-त्रासन ॥

काहू कै जौं सुनहिं बड़ाई । स्वास लेहिं जनु जूड़ी आई ॥
जब काहू कै देखहिं बिपती । सुखी भये मानहुँ जग नृपती ॥
स्वारथ रत परिवार विरोधी । लंपट काम लोभ अति क्रोधी ॥
मातु पिता गुरु विप्र न मानहिं । आपु गये अरु घालहिं आनहिं ॥
करहिं मोहवस द्रोह परावा । संत संग हरि कथा न भावा ॥
अव-गुन-सिंधु मंदमति कामी । वेद विदूषक पर-धन-स्वामी ॥
विप्रद्रोह सुरद्रोह विसेषा । दंभ कपट जिय धरे सुवेषा ॥

दोहा ।

ऐसे अधम मनुज खल, कृतजुग त्रेता नाहिं ।
द्वापर कछुक बृंद बहु, होइहहिं कलजुग माहिं ॥

चौपाई ।

परहित सरिस धर्म नहिं भाई । परपीड़ा सम नहिं अधमाई ॥
निरनय सकल पुरान वेद कर । कहेउँ तात जानहिं कोविद नर ॥
नर सरीर धरि जे पर पीरा । करहिं ते सहहिं महा-भव-भीरा ॥
करहिं मोहवस नर अघ नाना । स्वारथ रत परलोक नसाना ॥
कालरूप तिन्ह कहँ मैं भ्राता । सुभ अरु असुभ करम-फल-दाता ॥
अस विचारि जे परम सयाने । भजहिं मोहिं संसृति दुख जाने ॥
त्यागहिं कर्म सुभा-सुभ-दायक । भजहिं होहिं सुर-नर-मुनि-नायक ॥

संत असंतन के गुन भाखे। ते न परहिं भव जिन्ह लखि राखे ॥

दोहा।

सुनहु तात मायाकृत गुन, अरु दोष अनेक।
गुन यह उभय न देखियहिं, देखिय सो अविवेक ॥

——*——

परोपकार ।

——:o:——

चौपाई ।

संत सहज सुभाव अति दाया । पर उपकार वचन मन काया ॥
संत हृदय नवनीत समाना । कहा कविन पै कहिनहिं जाना ॥
निज परिताप द्रवै नवनीता । परहित द्रवहिं सुसंत पुनीता ॥
उमा संत की यही वड़ाई । मंद करत जो करै भलाई ॥
संत विटप सरिता गिरि धरनी । परहित हेतु इन्हन की करनी ॥
संत सहहिं दुख परहित लागी । पर दुख हेतु असन्त अभागी ॥
भूरुज तरु सम सन्त कृपाला । परहितसहनितविपतिविशाला ॥
परहित लागि तजे जो देही । संतत संत प्रसंसहिं तेही ॥
परहित वस जिनके मन माहीं । तिन कहं जग दुर्लभ कछु नाहीं ॥
छमा सील जे पर उपकारी । ते द्विज प्रिय मोहि जथा खरारी ॥

——:※:——

मित्रता और प्रीति।

——※:०:※——

सोरठा।

जल पय सरिस विकाय, देखहु प्रीति की रीति भल।
विलग होइ रस जाय, कपट खटाई परतही॥

चौपाई।

जे न मित्र दुख होहिं दुखारी। तिन्हैं विलोकत पातक भारी॥
निज दुख गिरि सम रजकै जाना। मित्रक दुख रज मेरु समाना॥
जिन के अस माति सहज न आई। ते शठ हठ कत करत मिताई॥
कुपथ निवारि सुपंथ चलावा। गुण प्रगटे अवगुणहि दुरावा॥
देत लेत मन शंक न धरहीं। वल अनुमान सदा हित करहीं॥
विपति काल कर शत गुण नेहा। श्रुति कह संत मित्र गुण एहा॥
आगे कह मृदु वचन बनाई। पाछे अनहित मन कुटिलाई॥
जाकर चित अहिगत सम भाई। अस कुमित्र परिहरे भलाई॥
सेवक शठ, नृप कृपण, कुनारी। कपटी मित्र, शूल सम चारी

———

स्त्री के स्वभाव और धर्म ।

चौपाई ।

पुत्रवती युवती जग सोई । रघुवर भक्त जासु सुत होई ॥
नतरु बांझ भलि वादि वियानी । राम विमुख सुत ते हित हानी ॥
मातु पिता भगिनी प्रिय भाई । प्रिय परिवार सुहृद समुदाई ॥
सासु ससुर गुरु सजन सहाई । सुत सुन्दर सुसील सुखदाई ॥
जहिं लगि नाथ नेह अरु नाते । पियबिनु तियहि तरनिहुं ते ताते ॥
तन धन धाम धरनि पुरराजू । पति विहीन सब सोक समाजू ॥
भोग रोगसम भूषन भारू । जम-जातना-सरिस संसारू ॥
जिअ बिनु देह नदी बिनु वारी । तइसिअ नाथ पुरुष बिनु नारी ॥
मातु-पिता-भ्राता-हित-कारी । मितप्रद सब सुनु राज कुमारी ॥
अमितदानि भर्त्ता वैदेही । अधम सो नारि जो सेव न तेही ॥
धीरज धरम मित्र अरु नारी । आपद काल परिखयहिं चारी ॥
वृद्ध रोगवस जड़ धन हीना । अंध बधिर क्रोधी अतिदीना ॥
ऐसेहु पति कर किये अपमाना । नारि पाव जमपुर दुख नाना ॥
एकइ धरम एक व्रत नेमा । काय वचन मन पतिपद प्रेमा ॥
जग पतिव्रता चारि विधि अहहीं । वेद पुरान संत सब कहहीं ॥

दोहा ।

उत्तम मध्यम नीच लघु, सकल कहउँ समुझाइ ।
आगे सुनहिं ते भव तरहिं, सुनहु सीय चित लाइ ॥

चौपाई ।

उत्तम के अस बस मन माहीं । सपनेहुँ आन पुरुष जग नाहीं ॥
मध्यम परपति देखइ कैसे । भ्राता पिता पुत्र निज जैसे ॥
धरम बिचारि समुझि कुल रहई । सो निकृष्ट तिय स्रुति अस कहई ॥
बिनु अवसर भय तें रह जोई । जानेहु अधम नारि जग सोई ॥
पतिबंचक पर-पति-रत करई । रौरव नरक कलपसत परई ॥
छनसुख लागि जनमसतकोटी । दुख न समुझ तेहि सम को खोटी ॥
बिनुस्रम नारि परम गतिलहई । पतिव्रत-धर्म छांडि छल गहई ॥
पति प्रतिकूल जनम जहँ जाई । विधवा होइ पाइ तरुनाई ॥

सो० । सहज अपावनि नारि, पति सेवत सुभ गति लहइ ॥
जसु गावत स्रुति चारि, अजहुँ तुलसिका हरिहि प्रिय ॥

चौपाई ।

नारि सुभाव सत्य कवि कहई । अवगुण आठ सदा उर रहईं ॥
साहस अनृत चपलता माया । भय अविवेक अशौच अदाया ॥
सत्य कहहिं कवि-नारि सुभाऊ । सब विधि अगम अगाध दुराऊ ॥

निज प्रतिबिंबु बरुकि गहि जाई। जानि न जाइ नारि गति भाई॥
बिधिहु न नारि हृदय गति जानी। सकल कपट अघ अवगुनखानी॥

दो०। काम क्रोध लोभादि मद, प्रबल मोह कै धारि।
तिन महँ अति दारुण दुखद, माया रूपी नारि॥

चौपाई।

सुनि मुनि कह पुराण स्रुति संता। मोह बिपिन कहँ नारि बसंता॥
जप तप नेम जलाशय भारी। होइ ग्रीष्म शोषै सब वारी॥
काम क्रोध मद मत्सर भेका। इन्हहिं हर्षप्रद वर्षा एका॥
दुर्वासना कुमुद समुदाई। तिन्ह कहँ शरद सदा सुखदाई॥
धर्म सकल सरसीरुह बृंदा। होइ हिम तिन्हहिं देति दुख मंदा॥
पुनि ममता जवास बहुताई। पलुहै नारि शिशिर ऋतु पाई॥
पाप उलूक निकर सुखकारी। नारि निबिड़ रजनी अँधियारी॥
बुधि बल शील सत्य सबमीना। बड़ शीसम प्रिय कहहिं प्रवीणा॥
राखिय नारि यदपि उरमाहीं। युवती शास्त्र नृपति बश नाहीं॥
कत बिधि सिरज नारि जगमाहीं। पराधीन सपनेहु सुख नाहीं॥

प्रारब्ध की प्रबलता।

चौपाई।

होइहि सोइ जो राम रचि राखा। को करि तर्क बढ़ावहि शाखा॥
मेटि जाय नहिं राम रजाई। कठिन कर्म गति कछु न बसाई॥

दो०। कह मुनीश हिमवंत सुनु, जो विधि लिखा लिलार।
देव दनुज नर नाग मुनि, कोऊ न मेटनहार॥
तुलसी जसि भवितव्यता, तैसी मिलै सहाय।
आपु न आवै ताहि पै, ताहि तहां लैजाय॥

चौपाई।

जनम मरन सब दुख सुख भोगा। हानि लाभ प्रिय मिलन वियोगा॥
काल कर्मवश होहिं गुसाईं। परवश रात दिवस की नाईं॥

दो०। सुनहु भरत भावी प्रबल, बिलखि कहेउ मुनिनाथ।
हानिलाभ जीवन मरण, जस अपजस विधि हाथ॥

चौपाई।

कर्म प्रधान विश्व करि राखा। जो जस करै सो तस फल चाखा॥
करै जो कर्म पाव फल सोई। निगम नीति अस कह सब कोई॥
कौन काहु दुख सुख कर दाता। निज कृत कर्म भोग सब भ्राता॥
कौशल्या कह दोष न काहू। कर्म विवश दुख सुख छति लाहू॥
कठिन कर्म गति जान विधाता। जो शुभ अशुभ कर्मफल दाता॥

फुटकर नीति और शिक्षा।

—————:※:०:※:—————

चौपाई।

सोचिय विप्र जो वेदविहीना। तजि निज धरम विषय लयलीना॥
सोचिय नृपति जो नीति न जाना। जेहि न प्रजा प्रिय प्रान समाना॥
सोचिय बयसु कृपिन धनवानू। जो न अतिथि सिव भगति सुजानू॥
सोचिय सूद्र विप्र अपमानी। मुखर मानप्रिय ज्ञानगुमानी॥
सोचिय पुनि पतिवंचकनारी। कुटिल कलह प्रिय इच्छाचारी॥
सोचिय वटु निजव्रत परिहरई। जो नहिं गुरु आयसु अनुसरई॥

दो०। सोचिय गृही जो मोहवस, करइ करम पथ त्याग।
सोचिय जती प्रपंच रत, विगत विवेक विराग॥

चौपाई।

वैपानस सोइ सोचन जोगू। तप विहाइ जेहि भावइ भोगू॥
सोचिय पिसुन अकारन क्रोधी। जननि-जनक-गुरु-बंधु-विरोधी॥
सव विधि सोचिय पर अपकारी। निजतनु पोषक निरदय भारी॥
सोचनीय सवही विधि सोई। जो न छाडि छल हरिजन होई॥
कौल[1] कामवश[2] कृपिन[3] विमूढा[4]। अति दरिद्र[5] अजसी[6] अतिबूढा[7]॥
सदा रोगवश[8] संतत क्रोधी[9]। विष्णु विमुख[10] स्रुति-संत विरोधी[11]॥

१२ १३ १४
तनु पोषक निंदक अघखानी । जीवत शव सम चौदह मानी ॥

दो० । द्वैत बुद्धि बिनु क्रोध किमि, द्वैत कि बिनु अज्ञान ।
माया वस परिछिन्न जड़, जीव कि ईस समान ॥

चौपाई ।

कबहुँ कि दुख सबकररहित ताके । तेहि कि दरिद्र परसमनि जाके ॥
परद्रोही किमि होइ निःसंका । कामी पुनि कि रहहि अकलंका॥
बंस कि रह द्विज अनहित कीन्हे । कर्म कि होहिं स्वरूपहिं चीन्हे ॥
काहू सुमति कि खल संग जामी । सुभगति पाव कि परत्रियगामी॥
भव कि परहिं परमातम बिंदक । सुखी कि होहिं कबहुँ परनिंदक॥
राज कि रहइ नीति बिनु जाने । अघ कि रहइ हरिचरित बखाने ॥
पावन जस कि पुन्य बिनु होई । बिनु अघ अजस कि पावइकोई ॥
लाभ कि कछु हरि-भगति समाना । जेहि गावहिं स्रुतिसंत पुराना ॥
हानि कि जग एहि सम कछुभाई । भजिय नरामहिं नरतनु पाई॥
अघ कि पिसुनता सम कछुआना । धर्मकिदया सरिसहरि जाना ॥

दो० । भले भलाई पै लहहिं, लहहिं निचाई नीच ॥
सुधा सराहिय अमरता, गरल सराहिय मीच ॥

जड़चेतन गुणदोष मय, विश्व कीन्ह करतार ॥
संत हंस गुण गहहिं पय, परिहरि वारि विकार ॥

चौपाई ।

जग बहु नर सरिता सम भाई । जे निज बाढ़ि बढ़हिं जल पाई ॥
सज्जन सुकृत सिंधु सम कोई । देखि पूर विधु बाढहिं जोई ॥
नहिं कोउ अस जनमेउ जग माहीं । प्रभुतापाइ जाहि मदनाहीं ॥
यदपि मित्र प्रभु पितु गुरु गेहा । जाइय बिनुबोलेहु नसंदेहा ॥
तदपि विरोध मान जहँ कोई । तहां गये कल्याण न होई ॥
यद्यपि जग दारुण दुख नाना । सब ते कठिन जाति अपमाना ॥
हरि हर निंदा सुनहिं जे काना । होइ पाप गोघात समाना ॥
संत शंभु श्रीपति अपवादा । सुनिय जहां तहं अस मर्यादा ॥
काटिय तासु जीभ जु वसाई । श्रवण मूँद नहिं चलिय पराई ॥
शुभअरु अशुभ सलिल सब वहई । सुरसरि कोउ अपुनीत न कहई ॥
समरथ कहँ नहिं दोष गुसाईं । रवि पावक सुरसरि की नाईं ॥
शासति करि पुनि करहिं पसाऊ । नाथ प्रभुन कर सहज सुभाऊ ॥
कत विधि सिरज नारि जग माहीं । पराधीन सपनेहु सुख नाहीं ॥
जिन्ह हरि कथा सुनी नहिं काना । श्रवण रंध्र अहिभवन समाना ॥
नयनन संत दरश नहिं देखा । लोचन मोरपंख कर लेखा ॥
ते सिर कटु तूंबी सम तूला । जे न नमत हरि गुरु पद मूला ॥
जिन्ह हरि भक्ति हृदय नहिं आनी । जीवत शव समान तेहि प्रानी ॥
जे नहिं करहिं राम गुण गाना । जीह सो दादुर जीह समाना ॥

जिन्ह कृत महा मोह मद पाना । तिन कर कहा करिय नहिं काना ॥
जे कामी लोलुप जग माहीं । कुटिल काक इव सबहिं डराहीं ॥
जनि आश्चर्य करहु मन माहीं । सुत तप तें दुर्लभ कछु नाहीं ॥
तप बलतें जग सृजै विधाता । तप बल विष्णु भये परित्राता ॥
तप बल शंभु करहिं संहारा । तप तें अगम न कछु संहारा ॥
तप बल शेष धरहि महि भारा । तप अधार सब सृष्टि अपारा ॥
बडे सनेह लघुन पर करहीं । गिरि निज शिरन सदा तृण धरहीं ॥
जलधि अगाध मौलि बहु फेणू । संतत धरणि धरत शिर रेणू ॥

दो० । रिपु तेजसी अकेल अपि, लघु करि गणिय न ताहु ॥
अजहुं देत दुख रवि शशिहि, शिर अवशेषित राहु ॥
भरद्वाज सुनु जाहि जब, होत विधाता वाम ।
धूरि मेरु सम जनक यम, ताहि व्याल सम दाम ॥

चौपाई ।

जिन के लहहिं न रिपु रण पीठी । नहिं लावहिं परतिय मनडीठी ॥
मंगन लहहिं न जिन के नाहीं । ते नर वर थोरे जग माहीं ॥
जेहि के जेहि पर सत्य सनेहू । सो तेहि मिलै न कछु संदेहू ॥
का वर्षा जब कृषी सुखाने । समय चूकि पुनि का पछताने ॥

दो० । सूर समर करणी करहिं, कहि न जनावहिं आपु ।
विद्यमान रण पाइ रिपु, कायर कथहिं प्रलापु ॥

चौपाई ।

मन मलीन तनु सुन्दर कैसे । विपरस भरा कनक घट जैसे ॥
वररे बालक एक स्वभाऊ । इनहिं न सन्त विदूपहिं काऊ ॥
गुनहु लपण कर हम पर रोषू । कतहुं सुधाइहु तें बड़ दोषू ॥
टेढ़ जानि शंका सब काहू । वक्र चन्द्रमहिं ग्रसै न राहू ॥
क्षमहु चूक अनजानत केरी । चहिय विप्र उर कृपा घनेरी ॥

दो० । काने खोरे कूवरे, कुटिल कुचाली जानि ।
तिय विशेष पुनि चेरिं कहि, भरतमात मुसुकानि ॥

चौपाई ।

अरि वश दैव जिआवे जाही । मरण नीक तेहि जीवन चाही ॥
नहिं असत्य सम पातक पुंजा । गिरि सम होहि कि कोटिक गुंजा ॥
सत्य मूल सब सुकृत सुहाए । वेद पुराण विदित मुनि गाये ॥
धर्म न दूसर सत्य समाना । आगम निगम पुराण बखाना ॥
सुनु जननी सोइ सुत बड़भागी । जो पितु मातु वचन अनुरागी ॥
तनय मातु पितु पोषण हारा । दुर्लभ जननी यह संसारा ॥

दो० । का नहिं पावक जारि सक, का न समुद्र समाइ ।

का न करै अवला प्रवल, केहि जग काल न खाइ ॥

चौपाई ।

बोले लषण मधुर मृदुवानी । ज्ञान विराग भक्ति रस सानी ॥
कौन काहु दुख सुखकर दाता । निजकृत कर्म भोग सब भ्राता ॥
योग वियोग भोग भल मन्दा । हित अनाहित मध्यम भ्रम फंदा ॥
जनम मरण जहँ लगि जगजालू । संपति विपति कर्म अरु कालू ॥
धरणि धाम धन पुर परिवारू । स्वर्ग नरक जहँ लगि व्यवहारू ॥
देखिय सुनिय गुणिय मन माहीं । मोह मूल परमारथ नाहीं ॥

दो० । सपने होइ भिखारि नृप, रंक नाकपति होइ ।
जागे लाभ न हानि कछु, तिमि प्रपंच जिय जोइ ॥

चौपाई ।

अस विचारि नहिं कीजिय रोषू । वादि काहु नहिं दीजिय दोषू ॥
मोह निशा सब सोवनहारा । देखहिं स्वप्न अनेक प्रकारा ॥
इहि जग यामिन जागहिं योगी । परमारथी प्रपंच वियोगी ॥
होइ विवेक मोह भ्रम भागा । तब रघुवीर चरण अनुरागा ॥
सखा परम परमारथ एहू । मन क्रम वचन राम पद नेहू ॥
संभावित कहँ अपयश लाहू । मरण कोटि सम दारुण दाहू ॥
सेवक सुख चह मान भिखारी । व्यसनी धन शुभगति व्यभिचारी ॥

लोभी यश चह चारु गुमानी। नभ दुहि दूध चहत ए प्राणी॥

दो०। अनुचित उचित विचारि तजि, जे पालहिं पितु वयन।
ते भाजन सुख सुयश के, वसहिं अमरपति अयन॥

चौपाई।

साधु समाज न जाकर लेखा। राम भक्त महँ जासु न रेखा॥
जाय जियत जग सो महिभारू। जननी यौवन विटप कुठारू॥
सुनि गुह कहै नीक कह बूढा। सहसा करि पछिताहिं विमूढ़ा॥
सहसा करि पाछे पछिताहीं। कहहिं वेद बुध ते बुध नाहीं॥
मांगौं भीख त्यागि निज धर्मू। आरत काह न करहिं कुकर्मू॥
विषयी जीव पाइ प्रभुताई। मूढ मोहवश होहिं जनाई॥
विषयी साधक सिद्ध सयाने। त्रिविधि जीव जग वेद वखाने॥
राम सनेह सरस मन जासू। साधु सभा बड़ आदर तासू॥
कसे कनक मणि पारिप पाए। पुरुष परखिये समय सुभाए॥
प्रभु अपने नीचहुँ आदरहीं। अग्नि धूम गिरि शिर तृण धरहीं॥
मात मृत्यु पितु शमन समाना। सुधा होइ विष सुनु हरिजाना॥
मित्र करै शत रिपु की करणी। ताकहँ विबुध नदी वैतरणी॥
सब जग ताहि अनल तें ताता। जो रघुवीर विमुख सुनु भ्राता॥
गरल सुधा रिपु करै मिताई। गोपद सिंधु अनल शितलाई॥
गरुअ सुमेरु रेणु सम ताही। राम कृपा कर चितवहिं जाही॥

राज नीति विनु धन विनु धर्मा । हरिहिं समर्पे विनु सत कर्मा ॥
विद्या विनु विवेक उपजाये । श्रमफल पढ़ै किये अरु पाये ॥
संग ते यती कुमन्त्र ते राजा । मान ते ज्ञान पान ते लाजा ।
प्रीति प्रणय विनु मद ते गुणी । नाशहिं वेगि नीति अस सुनी ॥
नमनि नीच की अति दुखदाई । जिमि अंकुश धनु उरग विलाई ॥
भय दायक खल की प्रिय वानी । जिमि अकाल के कुसुम भवानी ॥
तव मारीच हृदय अनुमाना । नवहिं विरोधे नहिं कल्याना ॥
शस्त्री मर्मी प्रभु शठ धनी । वैद वंदि कवि मानुष गुनी ॥
राखिय नारि यदपि उर माहीं । युवती शास्त्र नृपति वश नाहीं ॥

दो० । तात तीनि अति प्रवल खल, काम क्रोध अरु लोभ ।
मुनि विज्ञान निधान मन, करहिं निमिष महँ क्षोभ ॥
लोभ के इच्छा दंभवल, काम के केवल नारि ।
क्रोध के परुषवचन वल, मुनिवर कहहिं विचारि ॥

चौपाई ।

सेवक शठ नृप कृपण कुनारी । कपटी मित्र शूल सम चारी ॥
अनुज वधू भगिनी सुतनारी । सुनु शठ ए कन्या समचारी ॥
इन्हैं कुदृष्टि विलोकै जोई । ताहि वधे कछु पाप न होई ॥
विषय विवश सुरनर मुनिस्वामी । मैं पामर पशु कपि अतिकामी ॥
नारि नयन शर जाहि न लागा । घोर क्रोधतम निशि जोजागा ॥

लोभ पाश जेहि गर न बधाया । सो नर तुम समान रघुराया ॥
यह गुण साधन ते नहिं होई । तुम्हरी कृपा पाव कोइ कोई ॥

दो० । सचिव वैद्य गुरु तीनि जो, बोलहिं प्रिय भय आंस ।
राज धर्म तनु तीनि कर, होइ वेगही नास ॥
काम क्रोध मद लोभ सब, नाथ नरक कर पंथ ।
सब परिहरि रघुवीर पद, भजहु कहहिं सद्ग्रंथ ॥

जहां सुमति तहं संपति नाना । जहां कुमति तहं विपति निदाना ॥

दो० । शरणागत कहं जे तजहिं, निज अनहित अनुमानि ॥
ते नर पामर पापमय, तिनहिं विलोकत हानि ॥

चौपाई ।

वरु भल वास नरक कर ताता । दुष्ट संग जनि देहि विधाता ॥
शठ सन विनय कुटिल सन प्रीती । सहज कृपण सन सुंदर नीती ॥
ममता रत सन ज्ञान कहानी । अति लोभी सन विरति वखानी ॥
क्रोधिहि शम कामिहि हरिकथा । ऊपर बीज बये फल यथा ॥

दो० । काटे पै कदली फलै, कोटि यतन कोउ सींच ।
विनय न मान खगेश सुनु, डाटेहिं पै नम नीच ॥

चौपाई ।

ढोल गंवार शूद्र पशु नारी । ये सब ताड़न के अधिकारी ॥

नाथ वैर कीजै ताही सों । बुधि वल जीति सकिय जाही सों ॥
वेद कहहिं अस नीति दशानन । चौथे पन जाइय नृप कानन ॥
तासु भजन कीजै तहँ भर्त्ता । जो कर्त्ता पालक संहर्त्ता ॥
प्रिय वाणी जे सुनहिं जे कहहीं । ऐसे जग निकाय नर अहहीं ॥
वचन परम हित सुनत कठोरे । कहहिं सुनहिं ते नर प्रभु थोरे ॥

सो० । फूलै फलै न वेत, यदपि सुधा वरषैं जलद ।
मूरख हृदय न चेत, जो गुरु मिलहिं विरंचि शत ॥

दो० । प्रीति विरोध समान सन, करिय नीति असि आहि ।
जो मृगपति वध मेंडुकहिं, भलो कहइ को ताहि ॥

चौपाई ।

साम दान अरु दंड विभेदा । नृप उर वसहिं नाथ कह वेदा ॥
सन्मुख मरण वीर की शोभा । तव तिन तजा प्राण कर लोभा ॥

दो० । ताहि कि संपति सगुण शुभ, सपनेहु मन विश्राम ।
भूतद्रोहरत मोहवश, राम विमुख रत काम ॥

चौपाई ।

शौरज धीर जाहि रथ चाका । सत्य शील दृढ़ ध्वजा पताका ॥
वल विवेक दम परहित घोरे । क्षमा दया समता रजु जोरे ॥
ईश भजन सारथी सुजाना । विरति चर्म संतोष कृपाना ॥
दान परशु बुधि शक्ति प्रचंडा । वर विज्ञान कठिन को दंडा ॥

संयम नियम शिलीमुख नाना । अमल अचल मन तूणिसमाना ॥
कवच अभेद्य विप्र पद पूजा । एहि सम विजय उपाय न दूजा ॥
सखा धर्ममय अस रथ जाके । जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताके ॥

दो० । महा अजय संसार रिपु, जीति सकै सो वीर ।
जाके अस रथ होइ दृढ़, सुनहु सखा मति धीर ॥

छन्द ।

जानि जल्पना करि सुयश नाशहि नीति सुनि शठ करु क्षमा ।
संसार मंह पूरुष त्रिविध पाटल रसाल पनस समा ॥
इक सुमनप्रद इक सुमनफल इक फलै केवल लागहीं ।
इक कहहिं कहहिं करहिं अपर इक करहिं कहत न बागहीं ॥

सोरठा । पन्नगारि असनीति, श्रुति सम्मत सज्जन कहहिं ।
अति नीचहु सन प्रीति, करिय जान निज परमहित ॥
पाट कीट तैं होइ, तेहितें पाटांबर रुचिर ।
कृमि पालै सबकोइ, परम अपावन प्राण सम ॥

चौपाई ।

सुर नर मुनि सब के यह रीती । स्वारथ लागि करैं सब प्रीती ।
स्वारथ मित्र सकल जग माहीं । सपनेहु प्रभु परमारथि नाहीं ॥

———:※:———

गरुड़जी के कागभुशुंडि प्रति ७ प्रश्न और उनके उत्तर।

—————:※:०:※:—————

चौपाई।

पुनि सप्रेम बोलेउ खगराऊ। जो कृपाल मोहि ऊपर भाऊ॥
नाथ मोहि निज सेवक जानी। सप्त प्रश्न मम कहहु बखानी॥
प्रथमहि कहहु नाथ मति धीरा। सब तें दुर्लभ कवन शरीरा॥
बड़ दुख कवन कवन सुख भारी। सोउ संछेपहि कहहु बिचारी॥
संत असंत मरम तुम्ह जानहु। तिन्हकर सहज सुभाव बखानहु॥
कवन पुन्य स्नुति बिदित बिसाला। कहहु कवन अघपरम कृपाला॥
मानस रोग कहहु समुझाई। तुम्ह सर्वज्ञ कृपा अधिकाई॥
तात सुनहु सादर अतिप्रीती। मैं संछेप कहउँ यह नीती॥
नर-तंन-सम नहिं कवनिउ देही। जीव चराचर जाचत जेही॥
नरक-सर्ग-अपवर्ग-निसेनी। ज्ञान-बिराग-भगति-सुख-देनी॥
सो तनु धरि हरि भजहिं न जे नर। होहिं बिषयरत मंद मंदतर॥
कांच किरिच बदले जिमि लेहीं। करतें डारि परसमनि देहीं॥
नहिं दरिद्र सम दुख जगमाहीं। संत-मिलन-सम-सुख कहुँ नाहीं॥

पर उपकार वचन मन काया। संत सहज सुभाव खगराया ॥
संत सहहिं दुख परहित लागी। पर-दुख-हेतु-असंत अभागी ॥
भूरज-तरु-सम संत कृपाला। परहित नित सह विपति विसाला ॥
सन इव खल परबंधन करई। खाल कढ़ाइ विपति सहि मरई ॥
खल बिनु स्वारथ परअपकारी। अहि मूषक इव सुनु उरगारी ॥
परसंपदा बिनासि नसाहीं। जिमि ससि हति हिम उपल बिलाहीं ॥
दुष्ट हृदय जग आरत हेतू। जथा प्रसिद्ध अधम ग्रह केतू ॥
संतउदय संतत सुखकारी। विस्वसुखद जिमि इन्दु तमारी ॥
परमधरम स्रुति विदित अहींसा। पर-निंदा-सम अघ न गिरीसा ॥
हरि-गुरु-निंदक दादुर होई। जनम सहस्र पाव तन सोई ॥
द्विजनिंदक बहु नरक भोग करि। जग जनमइ वायस सरीर धरि ॥
सुर-स्रुति-निंदक जे अभिमानी। रौरव नरक परहिं ते प्रानी ॥
होहिं उलूक संत-निंदा-रत। मोहनिसा प्रिय ज्ञान भानु मत ॥
सब के निंदा जे जड़ करहीं। ते चमगादुर होइ अवतरहीं ॥
सुनहु तात अब मानसरोगा। जेहि तें दुख पावहिं सब लोगा ॥
मोह सकल व्याधिन कर मूला। तेहि तें पुनि उपजइ बहु सूला ॥
काम बात कफ लोभ अपारा। क्रोध पित्त नित छाती जारा ॥
प्रीति करहिं जौं तीनिउ भाई। उपजइ सन्निपात दुखदाई ॥
विषय मनोरथ दुर्गम नाना। ते सब सूल नाम को जाना ॥

ममता दादु कंडु इरषाई । हरत विषाद गरह बहुताई ॥
परसुख देखि जरनि सोइ छाई । कुष्ट दुष्टता मन कुटिलाई ॥
अहंकार अति दुखद डवँरुआ । दंभ कपट मद मान नहरुआ ॥
तृस्ना उदर वृद्धि अतिभारी । त्रिविध ईषना तरुन तिजारी ॥
जुगविधि ज्वर मत्सर अविवेका । कहँ लगि कहहुँ कुरोग अनेका ॥

दो० । एक व्याधिवस नर मरहिं, ए असाध्य बहु व्याधि ।
पीड़हिं संतत जीव कहँ, सो किमि लहइ समाधि ॥
नेम धर्म आचार तप, ज्ञान जज्ञ जप दान ।
भेषज पुनि कोटिक नहीं, रोग जाहिं हरिजान ॥

चौपाई ।

एहि विधि सकल जीव जड़ रोगी । सोक हरष भय प्रीति वियोगी॥
मानस रोग कछुक मैं गाये । होहिं सब के लखि विरलइ पाये ॥
जाने तें छीजहिं कछु पापी । नास न पावहिं जन परितापी ॥
विषय कुपथ्य पाइ अंकुरे । मुनिहु हृदय का नर वापुरे ॥
राम कृपा नासहिं सब रोगा । जो एहि भांति बनइ संजोगा ॥
सद्‌गुरु वेद वचन विस्वासा । संजम यह न विषय कै आसा ॥
रघु-पति-भगति सजीवनमूरी । अनूपान स्रद्धा मति पूरी ॥
एहि विधि भलेहि सो रोग नसाहीं । नाहिंत जतन कोटि नहिं जाहीं ॥

जानिय तब मन विरुज गोसाईं । जब उर बल बिराग अधिकाईं ॥
सुमति छुधा बाढ़इ नित नई । बिषय आस दुर्बलता गई ॥
बिमल ज्ञानजल जब सो न्हाई । तब रह राम भगति उर छाई ॥
सिव अज सुक सनकादिक नारद । जे मुनि ब्रह्म-बिचार बिसारद ॥
सब कर मत खगनायक एहा । करिय राम-पद-पंकज नेहा ॥
स्रुति पुरान सब ग्रंथ कहाहीं । रघु-पति-भगति बिना सुख नाहीं ॥
कमठपीठि जामहिं बरु बारा । बंध्यासुत बरु काहुहि मारा ॥
फूलहिं नभ बरु बहुबिधि फूला । जीव न लह सुख हरि-प्रति-कूला ॥
तृषा जाइ बरु मृग-जल-पाना । बरु जामहिं सस सीस बिखाना ॥
अंधकार बरु रबिहि नसावइ । रामबिमुख न जीव सुख पावइ ॥
हिम तें अनल प्रगट बरु होई । बिमुख राम सुख पाव न कोई ॥

दो० । बारि मथे घृत होइ बरु, सिकता तें बरु तेल ।
बिनु हरिभजन न भव तरहिं, यह सिद्धांत अपेल ॥
मसकहि करइ बिरंचिप्रभु, अजहि मसक तें हीन ।
अस बिचारि तजि संसय, रामहिं भजहिं प्रबीन ॥

। नगस्वरूपिणी

विनिश्चितं वदामि ते न अन्यथा वचांसि मे ।
हरिं नरा भजन्ति येऽति दुस्तरं तरन्ति ते ।

———:o:———

माया की प्रचण्ड सेना की प्रबलता

:*:०:*:

चौपाई।

अति प्रचंड रघुपति की माया। जेहि न मोह अस को जग जाया॥

सो०। सुर नर मुनि कोउ नाहिं, जेहि न मोह माया प्रबल।
अस विचारि मन माहिं, भजिय महा माया पतिय॥

चौपाई।

तुम निज मोह कहा खगसाईं। सो नहिं कछु आचरज गुसाईं॥
नारद भव विरंचि सनकादी। जे मुनि नायक आतमवादी॥
मोह न अंध कीन्ह केहि केही। को जग काम नचाव न जेही॥
तृष्णा केहि न कीन्ह बौराहा। केहि कर हृदय क्रोध नहिं दाहा॥

दो०। ज्ञानी तापस सूर कवि, कोविद गुन आगार।
केहि कै लोभ विडम्बना, कीन्हि न एहि संसार॥
श्रीमद वक्र न कीन्ह केहि, प्रभुता बधिर न काहि।
मृग-लोचनि-लोचन सर, को अस लागि न जाहि॥

चौपाई।

गुन कृत सन्यपात नहिं केही। कोउ न मान मद तजेउ निबेही॥

जोवन ज्वर केहि नहिं वलकावा। ममता केहिकर जसु न नसावा॥
मच्छर काहि कलंक न लावा। काहि न सोकसमीर डोलावा॥
चिंतासांपिन को नहिं खाया। को जग जाहि न व्यापी माया॥
कीट मनोरथ दारु सरीरा। जेहि न लाग घुन को अस धीरा॥
सुत वित लोक ईषना तीनी। केहि कै मति इन्ह कृत न मलीनी॥
यह सव माया कर परिवारा। प्रवल अमित को वरनइ पारा॥
सिव चतुरानन जाहि डेराहीं। अपर जीव केहि लेखे माहीं॥

दो०। व्यापि रहेउ संसार महँ, माया कटक प्रचंड।
सेनापति कामादि भट, दंभ कपट पाखंड॥
सो दासी रघुवीर कै, समुझे मिथ्या सोपि।
छूट न राम कृपा विनु, नाथ कहउँ पद रोपि॥

चौपाई।

जो माया सव जगहि नचावा। जासु चरित लखि काहु न पावा।
सोइ प्रभु भ्रूविलास खगराजा। नाच नटी इव सहित समाजा॥

———:o:———

ईश्वर और जीव का भेद

—————:%०%:—————

दो० । ईश्वर जीवहु भेद प्रभु, सकल कहहु समुझाइ ।
जाते होइ चरण रति, शोक मोह भ्रम जाइ ॥

चौपाई ।

थोरे महँ सब कहौं बुझाई । सुनहु तात मति मन चित लाई ॥
मैं अरु मोर तोर तैं माया । जेहिं वस कीन्हें जीव निकाया ॥
गो गोचर जहँ लगि मन जाई । सो सब माया जानेहु भाई ॥
तेहि कर भेद सुनहु तुम सोऊ । विद्या अपर अविद्या सोऊ ॥
एक दुष्ट अतिशय दुखरूपा । जा वश जीव परे भव कूपा ॥
एक रचै जग गुण वश जाके । प्रभु प्रेरित नहिं निज वल ताके ॥
ज्ञान मान जहँ एकौ नाहीं । देखत ब्रह्म रूप सब माहीं ॥
कहिये तासों परम विरागी । तृण सम सिद्धि तीनि गुण त्यागी ॥

दो० । माया ईश न आपु कहँ, जानि कहै सो जीव ।
वंध मोक्ष प्रद सर्व पर, माया प्रेरक सीव ॥

———:०:———

श्री भगवान के निवासस्थान।

दो०। पूछेहु मोहि कि रहउँ कहँ, मैं पूछत सकुचाउँ।
जहँ न होहु तहँ देहु कहि, तुम्हहिं देखावउँ ठाउँ॥

चौपाई।

सुनि मुनि वचन प्रेम रस साने। सकुचि राम मनमहँ सकुचाने॥
वालमीक हँसि कहहिं वहोरी। वानी मधुर अमियरस वोरी॥
सुनहु राम अव कहउँ निकेता। जहां वसहु सिय-लषन-समेता॥
जिन्ह के स्रवन समुद्र समाना। कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना॥
भरहिं निरन्तर होहिं न पूरे। तिन्ह के हिय तुम्ह कहँ गृह रूरे॥
लोचन चातक जिन्ह करि राखे। रहहिं दरसजलधर अभिलाषे॥
निंदरहिं सरित सिंधु सर भारी। रूप विंदु जल होहिं सुखारी॥
तिन्ह के हृदय सदन सुखदायक। वसहु वंधु-सिय-सह रघुनायक॥

दो०। जस तुम्हार मानस विमल, हंसिनि जीहा जासु।
मुकताहल गुनगन चुनइ, राम वसहु मन तासु॥

चौपाई॥

प्रभु प्रसाद सुचि सुभग सुवासा। सादर जासु लहइ नित नासा॥

तुम्हहिं निवेदित भोजन करहीं । प्रभु प्रसाद पट भूषन धरहीं ॥
सीस नवहिं सुर-गुरु-द्विज देखी । प्रीतिसहित करि विनय विसेखी ॥
कर नित करहिं रामपद पूजा । राम भरोस हृदय नहिं दूजा ॥
चरन रामतीरथ चलि जाहीं । राम वसहु तिन्ह के मन माहीं ॥
मंत्रराज नित जपहिं तुम्हारा । पूजहिं तुमहिं सहित परिवारा ॥
तरपन होम करहिं विधि नाना । विप्र जेवांइ देहिं बहुदाना ॥
तुम्ह तें अधिक गुरुहिं जियजानी । सकल भाय सेवहिं सनमानी ॥

दो०। सब करि मांगहिं एकु फल, राम-चरन-रति होउ ।
तिन्ह के मन मंदिर वसहु, सिय रघुनन्दन दोउ ॥

चौपाई ॥

काम कोह मद मान न मोहा । लोभ न छोभ न राग न द्रोहा ॥
जिन्ह के कपट दंभ नहिं माया । तिन्ह के हृदय वसहु रघुराया ॥
सब के प्रिय सब के हितकारी । दुख-सुख-सरिस प्रसंसा गारी ॥
कहहिं सत्य प्रियवचन विचारी । जागत सोवत सरन तुम्हारी ॥
तुम्हहिं छांड़ि गति दूसरि नाहीं । राम वसहु तिन के मनमाहीं ॥
जननी सम जानहिं पर नारी । धन पराव विष ते विष भारी ॥
जे हरपहि पर संपति देखी । दुखित होहिं परविपति विसेखी ॥
जिन्हहिं राम तुम्ह प्रान पियारे । तिन्ह के मन सुभसदन तुम्हारे ॥

दो० । स्वामि सखा पितु मातु गुरु, जिन्ह के सब तुम्ह तात।
मन मंदिर तिन्ह के बसहु, सीय सहित दोउ भ्रात ॥

चौपाई ।

अब गुन तजि सब के गुन गहहीं । विप्र-धेनु-हित संकट सहहीं ॥
नीति निपुन जिन्ह कइ जग लीका । घर तुम्हार तिन्ह कर मन नीका ॥
गुन तुम्हार समुझइ निज दोसा । जेहि सब भांति तुम्हार भरोसा ॥
राम भगत प्रिय लागहिं जेही । तेहि उर बसहु सहित वैदेही ॥
जाति पांति धन धरम बड़ाई । प्रिय परिवार सदन सुखदाई ॥
सब तजि तुम्हहिं रहइ लउलाई । तेहि के हृदय रहहु रघुराई ॥
सरग नरक अपबरग समाना । जहँ तहँ देख धरे धनुबाना ॥
करम-बचन-मन राउर चेरा । राम करहु तेहि के उर डेरा ॥

दो० । जाहि न चाहिय कबहुं कछु, तुम्ह सन सहज सनेह ।
बसहु निरंतर तासु मन, सो राउर निजगेह ॥

———:*:०:*:———

ज्ञान और भक्ति का अभेद
तथा
ज्ञान दीपक।

चौपाई।

जे असि भगति जानि परिहरहीं। केवल ज्ञान हेतु स्रम करहीं॥
ते जड़ काम धेनु गृह त्यागी। खोजत आक फिरहिं पय लागी॥
सुनु खगेस हरि भगति बिहाई। जे सुख चाहहिं आन उपाई॥
ते सठ महासिंधु बिनु तरनी। पैरि पार चाहहिं जड़ करनी॥
सुनि भुसुंडि के वचन भवानी। बोलेउ गरुड हरषि मृदुवानी॥
तव प्रसाद प्रभु मम उर माहीं। संसय-सोक-मोह-भ्रम नाहीं॥
सुनेउ पुनीत राम-गुन ग्रामा। तुम्हरी कृपा लहेउँ विस्रामा॥
एक बात प्रभु पूछउँ तोही। कहहु बुझाई कृपा निधि मोही॥
कहहिं संत मुनि वेद पुराना। नहिं कछु दुर्लभ ज्ञान समाना॥
सोइ मुनि तुम्ह सन कहेउ गुसाईं। नहिं आदरेहु भगतिकी नाईं॥
ज्ञानहिं भगतिहिं अंतर केता। सकल कहहु प्रभु कृपानिकेता॥
सुनि उरगारि वचन सुख माना। सादर बोलेउ काग सुजाना॥

भगतिहिं ज्ञानहिं नहिं कछु भेदा। उभय हरहिं भव संभव खेदा ॥
नाथ मुनीस कहहिं कछु अंतर। सावधान सोउ सुनु बिहंगबर ॥
ज्ञान विराग जोग विज्ञाना। ए सब पुरुष सुनहु हरिजाना ॥
पुरुष प्रताप प्रबल सब भांती। अबला अबल सहज जड़ जाती ॥

दो०। पुरुष त्यागि सक नारिहिं, जो विरक्ति मति धीर।
न तु कामी जो विषय बस, विमुख जो पद रघुबीर ॥

सो०। सो मुनि ज्ञान निधान, मृगनयनी विधु मुख निरखि।
विकल होहिं हरि जान, नारि विस्व माया प्रगट ॥

चौपाई।

इहां न पच्छपात कछु राखउं। वेद-पुरान-संत-मत-भाखउं ॥
मोह न नारि नारि के रूपा। पन्नगारि यह रीति अनूपा ॥
माया भगति सुनहु तुम्ह दोऊ। नारि वर्ग जानहिं सब कोऊ ॥
पुनि रघुवीरहिं भगति पियारी। माया खलु नर्त्तकी विचारी ॥
भगतिहिं सानुकूल रघुराया। तातें तेहि डरपाति अति माया ॥
राम भगति निरुपम निरुपाधी। वसइ जासु उर सदा अबाधी ॥
तेहि विलोकि माया सकुचाई। करि न सकइ कछु निज प्रभुताई ॥
अस विचारि जे मुनि विज्ञानी। जांचहिं भगति सकल सुख खानी ॥

दो० । यह रहस्य रघुनाथ कर, बेगि न जानइ कोइ ।
जो जानइ रघु-पति-कृपा, सपनेहुँ मोह न होइ ॥
अउरउ ज्ञान भगति कर, भेद सुनहु सुप्रवीन ।
जो सुनि होइ राम पद, प्रीति सदा अविछीन ॥

चौपाई ।

सुनहु तात यह अकथ कहानी । समुझत बनइ न जाइ बखानी ॥
ईश्वर अंस जीव अविनासी । चेतन अमल सहज सुखरासी ॥
सो माया बस भयउ गोसाईं । बँधेउ कीर मरकट की नाईं ॥
जड़ चेतनहिं ग्रंथि परिगईं । जदपि मृषा छूटत कठिनईं ॥
तब तें जीव भयउ संसारी । छूट न ग्रंथि न होइ सुखारी ॥
स्रुति पुरान बहु कहेउ उपाई । छूट न अधिक अधिक अरुझाई ॥
जीव हृदय तम मोह बिसेखी । ग्रंथि छूटि किमि परइ न देखी ॥
अस संजोग ईस जब करई । तबहुं कदाचित सो निरुवरई ॥
सात्विक स्रद्धा धेनु लवाई । जो हरि कृपा हृदय बसि आई ॥
जप तप व्रत जम नियम अपारा । जे स्रुति कह सुभ धर्म प्रचारा ॥
तेइ तृन सहित चरइ जब गाई । भाव बच्छ सिसु धेनु पेन्हाई ॥
नोइ निवृत्ति पात्र बिस्वासा । निर्मल मन अहीर निज दासा ॥

परम-धरम-मय पय दुहि भाई । अवटइ अनल अकाम बनाई ॥
तोष मरुत तब छमा जुड़ावइ । धृतिसम जावन देइ जमावइ ॥
मुदिता मथइ विचार मथानी । दम अधार रजु सत्य सुवानी ॥
तब मथि काढ़ि लेइ नवनीता । विमल विराग सुपरम पुनीता ॥

दो० । जोग अगिनि करि प्रगट तब, कर्म सुभासुभ लाइ ।
बुद्धि सिरावइ ज्ञान घृत, ममता मल जरि जाइ ॥
तब विज्ञान निरूपिनी, बुद्धि विसद घृत पाइ ।
चित्त दिया भरि धरइ दृढ़, समता दियटि बनाइ ॥
तीनि अवस्था तीनि गुन, तेहि कपास तें काढि ।
तूल तुरीय सँवारि पुनि, बाती करइ सुगाढि ॥

सो० । एहि विधि लेसइ दीप, तेजरासि विज्ञान मय ।
जातहिं जासु समीप, जरहिं मदादिक सलभ सब ॥

चौपाई ।

सोहमस्मि इति वृत्ति अखंडा । दीप सिखा सोइ परम प्रचंडा ॥
आतम-अनुभव--सुख सुप्रकासा । तब भव मूल भेदभ्रम नासा ॥
प्रबल अविद्या कर परिवारा । मोह आदि तम मिटइ अपारा ॥
तब सोइ बुद्धि पाइ उँजियारा । उर गृह बैठि ग्रंथि निरुवारा ॥
छोरन ग्रंथि पाव जौं कोई । तौ यह जीव कृतारथ होई ॥

छोरत ग्रंथि जानि खगराया । बिघन अनेक करइ तब माया ॥
रिद्धि सिद्धि प्रेरइ बहु भाई । बुद्धिहि लोभ देखावहिं आई ॥
कल बल छल करि जाइ समीपा । अंचल बात बुझावहिं दीपा ॥
होइ बुद्धि जो परम सयाने । तिन्ह तनु चितव न अनहित जाने ॥
जौं तेहि बिघन बुद्धि नहिं बाधी । तौ बहोरि सुर करहिं उपाधी ॥
इंद्री द्वार झरोखा नाना । तहँ तहँ सुर बैठे करि थाना ॥
आवत देखहिं बिषय बयारी । ते हठि देहिं कपाट उघारी ॥
जब सो प्रभंजन उरगृह जाई । तबहिं दीप बिज्ञान बुझाई ॥
ग्रंथि न छूटि मिटा सो प्रकासा । बुद्धि बिकल भइ बिषय बतासा ॥
इंद्रिन्ह सुरन्ह न ज्ञान सुहाई । बिषय भोग पर प्रीत सदाई ॥
बिषय समीर बुद्धि कृत भोरी । तेहि बिधि दीप को बार बहोरी ॥

दो० । तब फिरि जीव बिबिध बिधि, पावइ संसृति क्लेस ।
हरि माया अति दुस्तर, तरि न जाइ बिहँगेस ॥
कहत कठिन समुझत कठिन, साधन कठिन बिबेक ।
होइ घुनाच्छर न्याय जौं, पुनि प्रत्यूह अनेक ॥

चौपाई ।

ज्ञान पंथ कृपान कै धारा । परत खगेस होइ नहिं बारा ॥
जो निरबिघन पंथ निरबहई । सो कैवल्य परम पद लहई ॥

अति दुर्लभ कैवल्य परमपद । संत पुरान निगम आगम बद ॥
राम भजत सोइ मुक्ति गोसाईं । अनइच्छित आवइ बरिआई ॥
जिमि थल बिनु जल रहि न सकाई । कोटि भाँति कोउ करइ उपाई॥
तथा मोच्छ सुख सुनु खगराई । रहि न सकइ हरि भगति बिहाई ॥
अस बिचारि हरि भगत सयाने । मुक्ति निरादर भगति लोभाने ॥
भगति करत बिनु जतन प्रयासा । संसृति मूल अविद्या नासा ॥
भोजन करिय तृप्ति हित लागी । जिमि सो असन पचवइ जठरागी ॥
अस हरि भगति सुगम सुखदाई । को अस मूढ न जाहि सुहाई ॥

दो० । सेवक सेब्य भाव बिनु, भव न तरिय उरगारि ।
भजहु राम-पद-पंक-ज, अस सिद्धांत बिचारि ॥
जो चेतन कहँ जड करइ, जडहि करइ चैतन्य ।
अस सामरथ रघुनायकहिं, भजहिं जीव ते धन्य ॥

चौपाई ।

कहेउं ज्ञान सिद्धांत बुझाई । सुनहु भगति मन कै प्रभुताई ॥
राम भगति चिंतामनि सुन्दर । बसइ गरुड जाके उर अंतर ॥
परम प्रकास रूप दिन राती । नहिं कछु चहिय दिया घृत बाती ॥
मोह दरिद्र निकट नहिं आवा । लोभ बात नहिं ताहि बुझावा ॥
अचल अविद्या तम मिटि जाई । हारहिं सकल सलभ समुदाई ॥

खल कामादि निकट नहिं जाहीं । बसइ भगति जाके उरमाहीं ॥
गरल सुधा सम अरि हित होई । तेहि मनि विनु सुख पाव न कोई ॥
ब्यापहिं मानस रोग न भारी । जिन्ह के वस सब जीव दुखारी ॥
राम-भगति-मनि उर बस जाके । दुख-लव-लेस न सपनेहुँ ताके ॥
चतुर सिरोमनि तेइ जग माहीं । जे मनि लागि सुजतन कराहीं ॥
सो मनि जदपि प्रगट जग अहई । राम कृपा विनु नहिं कोउ लहई ॥
सुगम उपाइ पाइवे केरे । नर हतभाग्य देहिं भटभेरे ॥
पावन पर्वत वेद पुराना । राम कथा रुचिराकर नाना ॥
मर्मी सज्जन सुमति कुदारी । ज्ञान विराग नयन उरगारी ॥
भाव सहित खोजइ जो प्रानी । पाव भगति मनि सब सुखखानी ॥
मोरे मन प्रभु अस विस्वासा । राम तें अधिक राम कर दासा ॥
राम सिंधु घन सज्जन धीरा । चन्दन तरु हरि संत समीरा ॥
सब कर फल हरि भगति सुहाई । सो विनु संत न काहू पाई ॥
अस विचारि जोइ कर सतसंगा । राम भगति तेहि सुलभ विहंगा ॥

दो० । ब्रह्म पयोनिधि मंदर, ज्ञान संत सुर आहि ।
कथा सुधा मथि काढइ, भगति मधुरता जाहि ॥
बिरति चर्म असि ज्ञान मद, लोभ मोह रिपु मारि ।
जय पाइय सो हरि भगति, देखु खगेस विचारि ॥

———:o:———

निष्काम भक्तियोग ॥

दो० । रामचन्द्र के भजन बिनु, जो चह पद निर्वाण ।
ज्ञानवन्त अपि सोपि नर, पशु बिनु पूंछ विषाण ॥
राकापति षोड़श उगहिं, तारागण समुदाय ।
सकल गिरिन्ह दव लाइय, रवि बिनु राति न जाय ॥

चौपाई ।

योग कुयोग ज्ञान, अज्ञानू । जहां न राम प्रेम परधानू ॥
सो सुख करम धरम जरिजाऊ । जहं न राम पद पंकज भाऊ ॥
देह धरे कर यह फल भाई । भजिय राम सब काम बिहाई ॥
सोइ गुणज्ञ सोइ बड़भागी । जो रघुबीर चरण अनुरागी ॥
जप तप नियम योग व्रत धर्मा । श्रुति सम्भव नाना विधि कर्मा ॥
ज्ञान दया मति तीरथ मज्जन । जहँ लगि धर्म कहँ श्रुति सज्जन ॥
आगम निगम पुराण अनेका । पढ़े सुने कर फल प्रभु एका ॥
तव पद पंकज प्रीति निरन्तर । सब साधन कर फल यह सुंदर ॥
छूटै मल कि मलहि के धोए । घृत कि पाव कोउ बारि बिलोए ॥
प्रेम भक्ति जल बिनु रघुराई । अभ्यन्तर मल कबहुँ कि जाई ॥
सोइ सर्वज्ञ तज्ञ सोइ पंडित । सोइ गुणज्ञ विज्ञान अखंडित ॥
दक्ष सकल लक्षणयुत सोई । जाके पद सरोज रति होई ॥

नर सहस्र महं सुनहु पुरारी । कोउ इक होइ धर्म व्रतधारी ॥
धर्म शील कोटि महं कोई । विषय विमुख विरागरत होई ॥
कोटि विरक्त मध्य श्रुति कहई । सम्यक् ज्ञान सुकृत कोउ लहई ॥
ज्ञानवन्त कोटिक महँ कोई । जीवन मुक्त सुकृत जग सोई ॥
तिन सहस्रमहँ सब सुख खानी । दुर्लभ ब्रह्मनिरत विज्ञानी ॥
धर्म शील विरक्त अरु ज्ञानी । जीवन मुक्त ब्रह्मपर प्राणी ॥
सबते सो दुर्लभ सुरराया । राम भक्तिरत गत मद माया ॥

दो० । तब लगि कुशल न जीव कहँ, सपनेहु मन विश्राम ।
जब लगि भजत न राम कहँ, शोक धाम तजि काम ॥

चौपाई

तब लगि हृदय बसत खल नाना । लोभ मोह मत्सर मद माना ॥
जब लगि उर न बसत रघुनाथा । धरे चाप सायक कटि माथा ॥
ममता तिमिर तरुण अंधियारी । राग द्वेष उलूक सुखकारी ॥
तब लगि बसत जीव उर माहीं । जब लगि प्रभु प्रताप रवि नाहीं ॥
जो नर होइ चराचर द्रोही । आवै सभय शरण तकि मोही ॥
तजि मद मोह कपट छल नाना । करौं सद्य तेहि साधु समाना ॥
जननी जनक बंधु सुत दारा । तनु धन भवन सुहृद परिवारा ॥
सबकी ममता ताग बटोरी । मम पद मनहिं बांधि बर डोरी ॥

समदरशी इच्छा कछु नाहीं । हर्ष शोक भय नहिं मन माहीं ॥
अस सज्जन मम उर बस कैसे । लोभी हृदय बसत धन जैसे ॥
तुम से संत सदा प्रिय मोरे । धरेउँ देह नहिं आन निहोरे ॥
धर्म ते विरति योग ते ज्ञाना । ज्ञान मोक्ष प्रद वेद बखाना ॥
जातें वेगि द्रवौं मैं भाई । सो मम भक्ति भक्त सुखदाई ॥
सो स्वतन्त्र अवलंब न आना । तेहि आधीन ज्ञान विज्ञाना ॥
भक्ति तात अनुपम सुखमूला । मिलै जो संत होहिं अनुकूला ॥
भक्ति के साधन कहौं बखानी । सुगम पंथ मोहिं पावहिं प्राणी ॥
प्रथमहिं विप्र चरण अति प्रीती । निज निज धर्मनिरत श्रुतिरीती ॥
यहिकर फल पुनि विषय विरागा । तब मम चरण उपज अनुरागा ॥
श्रवणादिक नवभक्ति दृढ़ाहीं । मम लीला रति अति मनमाहीं ॥
संत चरण पंकज अति प्रेमा । मन क्रम वचन भजन दृढ नेमा ॥
गुरु पितु मातु बंधु पति देवा । सब मोहि कहँ जाने दृढ सेवा ॥
मम गुण गावत पुलकि शरीरा । गदगद गिरा नयन बह नीरा ॥
कामादिक मद दंभ न जाके । तात निरन्तर बश मैं ताके ॥

दो० । बचन कर्म मन मोर गति, भजन करैं निष्काम ।
तिन्ह के हृदय कमल महँ, करौं सदा विश्राम ॥

चौपाई ।

भक्ति हीन गुण सुख सब ऐसे । लवण बिना बहु व्यंजन जैसे ॥

जाति पांति कुल धर्म बड़ाई । धन बल परिजन गुण चतुराई ॥
भक्ति हीन नर सोहै कैसे । विनु जल बारिद देखिय जैसे ॥
नवधा भक्ति कहौं तोहिं पाहीं । सावधान सुनु धरु मन माहीं ॥
प्रथम भक्ति सन्तन कर संगा । दूसरि रति मम कथा प्रसंगा ॥

दो० । गुरु पद पंकज सेवा, तीसरि भक्ति अमान ।
चौथि भक्ति मम गुण गण, करै कपट तजि गान ॥

चौपाई ।

मंत्र जाप मम दृढ़ विश्वासा । पंचम भजन सो वेद प्रकासा ॥
छठ दम शील विरति वहु कर्मा । निरत निरंतर सज्जन धर्मा ॥
सातम सब मोहि मय जग देखैं । मोते संत अधिक करि लेखैं ॥
अष्टम यथालाभ संतोषा । सपनेहु नहिं देखै परदोषा ॥
नवम सरल सबसों छल हीना । मम भरोस जिय हर्ष न दीना ॥
नवमहं जिन्हके एकौ होई । नारि पुरुष सचराचर कोई ॥
सो अतिशय प्रिय भामिनि मोरे । सकल प्रकार भक्ति दृढ़ तोरे ॥

दो० । श्वपच शबर खल जमन जड़, पामर कोल किरात ।
राम कहत पावन परम, होत भुवन विख्यात ॥
मोहि भक्त प्रिय संतत, अस विचारि सुनु काग ।
काय वचन मन मम चरण, करे सुअचल अनुराग ॥

चौपाई ।

अव शृणु परम विमलमम वानी । सत्य सुगम निगमादि वखानी ॥
निज सिद्धांत सुनावौं तोही ।सुनि मन धरु सव ताजि भजु मोही॥
मम माया संभव संसारा । जीव चराचर विविधि प्रकारा ॥
सव मम प्रिय सव मम उपजाए । सवतें अधिक मनुज मोहि भाए॥
तेहिमहँ द्विज द्विज महँ श्रुतिधारी । तिन्हमहँ निगम धर्म अनुसारी ॥
तिन्ह महँ प्रिय विरक्त पुनि ज्ञानी । ज्ञानिहुतें अति प्रिय विज्ञानी ॥
तिन्हतें पुनि मोहि प्रिय निजदासा । तेहि गति मोर नदूसरि आसा ॥
पुनि पुनि सत्य कहौं तोहि पाहीं । मोहिं सेवक सम प्रियकोउ नाहीं ॥
भक्तिहीन विरंचि किन होई । सव जीवन सम प्रिय मोहि सोई ॥
भक्तिवंत अति नीचौ प्राणी । मोहि प्राणप्रिय सुनु मम वानी ॥
दो० । सुचि सुशील सेवक सुमति, प्रिय कहु काहि न लाग ।
श्रुति पुराण कह नीति अस, सावधानशृणु काग ॥

चौपाई ।

एक पिता के विपुल कुमारा । होइ पृथक गुण शील अचारा ॥
कोउ पंडित कोउ तापस ज्ञाता । कोउ धनवंत शूर कोउ दाता ॥
कोउ सर्वज्ञ धर्मरत कोई । सव पर पितहि प्रीति सम होई ॥

कोउ पितु भक्त वचन मन कर्मा । सपनेहु जान न दूसर धर्मा ॥
सो प्रिय सुत मम प्राण समाना । यद्यपि सो सब भांति अयाना ॥
एहि विधि जीव चराचर जेते । त्रिजग देवनर असुर समेते ॥
अखिल विश्व यह मम उपजाया । सब पर मोहि बराबरि दाया ॥
तिन्हमहँ जो परिहरि मद माया । भजहिं मोहि मन वच अरु काया ॥

दो० । पुरुष नपुंसक नारि नर, जीव चराचर कोइ ।
सर्व भाव भजु कपट तजि, मोहि परम प्रिय सोइ ॥

चौपाई ।

स्वारथ सर्व जीव कहँ एहा । मन क्रम वचन रामपद नेहा ॥
सोइ पावन सोइ सुभग शरीरा । जो तनु पाइ भजिय रघुवीरा ॥
राम विमुख लहि विधि सम देही । कविकोविदन प्रशंसहिं तेही ॥
रामहिं केवल प्रेम पियारा । जानि लेहु जो जानन हारा ॥
सो जानहुं जेहिं देहु जनाई । जानत तुम्है तुमहिं होइ जाई ॥
तुम्हरी कृपा तुमहिं रघुनन्दन । जानत भक्त भक्त उर चंदन ॥
निज अनुभव अब कहौं खगेशा । बिनु हरि भजन न जाहिं कलेशा ॥
राम कृपा विनु शृणु खगराई । जानि न जाइ राम प्रभुताई ॥
जाने विनु न होइ परतीती । विनु परतीति होइ नहिं प्रीती ॥

प्रीति विना नहिं भक्ति दृढ़ाई । जिमि खगेश जलकी चिकनाई ॥

सो० । विनु गुरु होइ कि ज्ञान, ज्ञान कि होइ विराग विनु ।
गावहिं वेद पुराण, सुख कि लहहिं हरि भक्ति विनु ॥
कोउ विश्राम कि पाव, तात सहज संतोष विनु ।
चलै कि जल विनु नाव, कोटि यतन करि पचि मरिय ॥

चौपाई ।

विनु संतोष न काम नसाहीं । काम अछत सुख सपनेहु नाहीं ॥
राम भजन विनु मिटहिंकि कामा । थल विहीन तरु कबहुंकि जामा ॥
विनु विज्ञान कि समता आवै । कोउ अवकाश कि नभ विनु पावै ॥
श्रद्धा बिना धर्म नहिं होई । विनु महि गंध कि पावै कोई ॥
विनु तप तेज कि करु विस्तारा । जल विनु रस कि होइ संसारा ॥
शील कि मिलु विनु वुध सेवकाई । जिमि विनु तेज न रूप गुसांई ॥
निज सुख विनु मन होइ किं थीरा । स्पर्श कि होइ विहीन समीरा ॥
कवनिउ सिद्धि कि विनु विश्वासा । विनु हरि भजन न भवभयनासा ॥

दो० । विनु विश्वास भक्ति नहिं, तेहि विनु द्रवहिं न राम ।
राम कृपा विनु सपनेहुँ, जीव न लह विश्राम ॥

सो० । अस विचारि मति धीर, तजि कुतर्क संशय सकल ।
भजहु राम रघुवीर, करुणा कर सुन्दर सुखद ॥

दो०। उमा योग जप दान तप, नाना व्रत मख नेम ।
राम कृपा नहिं करहिं तस, जासि निष्केवल प्रेम ॥

चौपाई ।

सकल सुकृत करफल सुत एहू । राम सीय पद सहज सनेहू ॥
जप तप मख शम दम वृत दाना । विरति विवेक योग विज्ञाना ॥
सब कर फल रघुपति पद प्रेमा । तेहु बिनु कोउ न पावै क्षेमा ॥

दो० । कलिमल शमन दमन मन, राम सुयश सुख मूल ।
सादर सुनहिं जे ताहि पर, राम रहहिं अनुकूल ॥
कठिन काल मल कोप, धर्म न ज्ञान न योग तप ।
परिहरि सकल भरोस, राम भजहिं ते चतुर नर ॥

चौपाई ।

एहि कलिकाल न साधन दूजा । योग यज्ञ जप वृत तप पूजा ॥
रामहिं सुमिरिय गाइय रामहिं । संतत सुनिय रामगुण ग्रामहिं ॥
जासु पतित पावन भगवाना । गावहिं कवि श्रुति संत पुराना ॥
जाहि भजिय तजि मन कुटलाई । राम भजे गति केहि नहिं पाई ॥

———:o:———

मूलरामायण* ।

———:*:०:*:———

चौपाई ।

अव श्रीराम कथा अति पावन । सदा सुखद दुख पुंज नशावन ॥
सादर तात सुनावहु मोही । वार वार विनवौं प्रभु तोही ॥
सुनत गरुड़ की गिरा विनीता । सरल सप्रेम सुखद सुपुनीता ॥
भएउ तासु मन परम उछाहा । कहै लाग रघुपति गुणगाहा ॥
प्रथमहिं अति अनुराग भवानी । राम चरित सब कहेसि वखानी ॥
पुनि नारदकर मोह अपारा । कहेसि बहुरि रावण अवतारा ॥
प्रभु अवतार कथा पुनि गाई । पुनि शिशु चरित कहेसि मनलाई ॥

दो० । वाल चरित कहि विविध विध, मन महँ परम उछाह ।
ऋषि आगमन कहेसि पुनि, श्रीरघुवीर विवाह ॥

चौपाई ।

वहुरि राम अभिषेक प्रसंगा । पुनि नृप वचन राजरस भंगा ॥
पुरवासिनकर विरह विषादा । कहेसि राम लक्ष्मण संवादा ॥

---

* केवल "मूलरामायण" के पाठ से समस्त रामायण के पाठ का फल होता है ।

विपिन गमन केवट अनुरागा । सुरसरि उतरि निवास प्रयागा ॥
वालमीक प्रभु मिलन वखाना । चित्रकूट जिमि वसु भगवाना ॥
सचिवागमन नगर नृपमरणा । भरतागमन प्रेम पुनि वरणा ॥
करि नृपक्रिया संग पुरवासी । भरत गए जहँ प्रभु सुखराशी ॥
पुनि रघुपति वहुविध समुझाए । लै पादुका अवध फिरि आए ॥
भरत रहनि सुरपतिसुत करणी । प्रभु अरु अत्रि भेट पुनि वरणी ॥

दो० । कहि विराधवध जाहि विध, देह तजी शरभंग ।
वरणि सुतीक्षण प्रेम पुनि, प्रभु अगस्त्य सत्संग ॥

चौपाई ।

कहि दंडकवन पावनताई । गृध्रमैत्री पुनि तेहि गाई ॥
पुनि प्रभु पंचवटी कृत वासा । भंजी सकल मुनिन्ह की त्रासा ॥
पुनि लक्ष्मण उपदेश अनूपा । शूर्पणखा जिमि कीन्ह कुरूपा ॥
खरदूपणवध वहुरि वखाना । जिमि सव मर्म दशानन जाना ॥
दशकंधर मारीच वतकही । जेहि विध भई सकल तेहि कही ॥
पुनि मायासीता कर हरणा । श्रीरघुवीर विरह कछु वरणा ॥
पुनि प्रभु गृध्र क्रिया जिमि कीन्ही । वधि कवंध शवरिहिं गतिदीन्ही ॥
वहुरि विरह वर्णत रघुवीरा । जेहि विध गयउ सरोवरतीरा ॥

दो० । प्रभु नारद सम्वाद कहि, मारुति मिलन प्रसंग ।
पुनि सुग्रीव मिताई, वालि प्राणकर भंग ॥
कपिहिं तिलक करि प्रभुकृत, शैल प्रवर्पण वास ।
वर्णत वर्षा शरद ऋतु, राम रोप कपित्रास ॥

चौपाई ।

जेहि विधि कपिपति कीश पठाए । सीता खोज सकल दिशि धाए ॥
विवर प्रवेश कीन्ह जेहि भांती । कपिन्ह वहोरि मिला सम्पाती ॥
सुनि सव कथा समीर कुमारा । लांघत भएउ पयोधि अपारा ॥
लंका कपि प्रवेश जिमि कीन्हा । पुनि सीतहिं धीरज जिमि दीन्हा ॥
वन उजारि रावणहिं प्रवोधी । पुर दहि लांघेउ वहुरि पयोधी ॥
आए कपि सव जहँ रघुराई । वैदेही की कुशल सुनाई ॥
सेन समेत यथा रघुवीरा । उतरे जाइ वारि: निधि तीरा ॥
मिला विभीपण जेहि विध आई । सागर निग्रह कथा सुनाई ॥

दो० । सेतु वांधि कपिसेन जिमि, उतरे सागर पार ॥
गयो वसीठी वीर वर, जेहि विध वालिकुमार ॥
निशिचर कीश लराइ वहु, वरणिसि विविध प्रकार ।
कुम्भकर्ण घननादकर, वल पौरुप संहार ॥

चौपाई ।

निशिचर निकर मरण विधि नाना । रघुपति रावण समर वखाना ॥
रावणवध मन्दोदरि शोका । राज विभीषण देव अशोका ॥
सीता रघुपति मिलन वहोरी । सुरन्ह कीन्ह अस्तुति करजोरी ॥
पुनि पुष्पक चढ़ि सीय समेता । अवध चले प्रभु कृपानिकेता ॥
जेहि विध राम नगर नियराये । वायस विशद चरित सब गाये ॥
कहेसि वहोरि राम अभिषेका । पुर वर्णन नृपनीति अनेका ॥
कथा समस्त भुशुंडि वखानी । जो मैं तुमसन कहा भवानी ॥
सुनि शुभ रामकथा खगनाहा । विगत मोह मन परम उछाहा ॥

सो० । गएउ मोर संदेह, सुनेउँ सकल रघुपति चरित ।
भएउ राम पद नेह, तव प्रसाद वायसतिलक ॥

इति मूल रामायण समाप्त ॥

अथ लछिमनगीता प्रारंभः ॥

——:*:o:*:——

चौपाई।

बोले लषन मधुर मृदु बानी। ज्ञान बिराग भगति रस सानी ॥
काहु न कोउ सुख दुखकर दाता। निजकृत करम भोग सब भ्राता ॥
जोग बियोग भोग भल मंदा। हित अनहित मध्यम भ्रम फंदा ॥
जनम मरन जहँ लगि जगजालू। संपति बिपति करम अरु कालू ॥
धरनि धाम धन पुर परिवारू। सरग नरक जहँ लगि व्यवहारू ॥
देखिय सुनिय गुनिय मनमाहीं। मोह मूल परमारथ नाहीं ॥

दो०। सपने होइ भिखारि नृप, रंक नाकपति होइ।
जागे लाभ न हानि कछु, तिमि प्रपंच जिय जोइ ॥

चौपाई।

अस बिचारि नहिं कीजिय रोषू। काहुहि बादि न देइय दोषू ॥
मोह निसा सब सोवनिहारा। देखहिं सपन अनेक प्रकारा ॥
यहि जग जामिनि जागहि जोगी। परमारथी प्रपंच बियोगी ॥
जानिय तबहिं जीव जग जागा। जब सब बिषय बिलास बिरागा ॥
होइ बिबेक मोह भ्रम भागा। तब रघुनाथ चरन अनुरागा ॥

सखा परम परमारथ एहू । मन क्रम वचन राम पद नेहू ॥
राम ब्रह्म परमारथ रूपा । अविगत अलख अनादि अनूपा ॥
सकल विकार रहित गत भेदा । कहि नित नेति निरूपहि वेदा ॥

दो० । भगत भूमि भूसुर सुरभि, सुरहित लागि कृपाल ।
करत चरित धरि मनुज तनु, सुनत मिटहिं जग जाल ॥

चौपाई ।

सखा समुझि अस परिहरि मोहू । सिय रघुवीर चरन रति होहू ॥

इति लछिमनगीता समाप्ता ॥

कलिकाल प्रभाव ॥

———:o:———

दो० । कलिमल ग्रसे धर्म सब, गुप्त भये सद ग्रन्थ ।
दंभिन्ह निज मति कल्पि करि, प्रगट किये बहु पन्थ ॥
भये लोग सब मोहबस, लोभ ग्रसे सुभ कर्म ।
सुनु हरि जान ज्ञान निधि, कहउँ कछुक कलि धर्म ॥

चौपाई ।

बरन धरम नहिं आस्रम चारी । स्रुति-बिरोध-रत सब नर नारी ॥
द्विज स्रुति बेचक भूप प्रजासन । कोउ नहिं मान निगम-अनु-सासन ॥
मारग सोइ जा कहँ जोइ भावा । पंडित सोइ जो गाल बजावा ॥
मिथ्यारम्भ दम्भरत जोई । ता कहँ सन्त कहहिं सब कोई ॥
सोई सयान जो पर-धन-हारी । जो कर दम्भ सो बड़ आचारी ॥
जो कह झूठ मसखरी जाना । कलियुग सोइ गुनवन्त बखाना ॥
निराचार जो स्रुतिपथ त्यागी । कलिजुग सोइ ज्ञानी बैरागी ॥
जाके नख अरु जटा बिसाला । सोइ तापस प्रसिद्ध कलिकाला ॥

दो० । असुभ बेप भूषन धरे, भच्छाभच्छ जे खाहिं ।
तेइ जोगी तेइ सिद्ध नर, पूज्य ते कलियुग माहिं ॥

सो० । जे अपकारी चार, तिन्ह कर गौरव मान्य वहु ।
मन क्रम बचन लवार, ते वकता कलिकाल महँ ॥

चौपाई ।

नारि विवस नर सकल गोसाईं । नाचहिं नट मरकट की नाईं ॥
सूद्र द्विजन्ह उपदेसहिं ज्ञाना । मेलि जनेऊ लेहिं कुदाना ॥
सब नर कामलोभरत क्रोधी । वेद-विप्र-गुरु-सन्त-विरोधी ॥
गुन मंदिर सुंदर पति त्यागी । भजहिं नारि परपुरुषअभागी ॥
सौभागिनी विभूषनहीना । विधवन्ह के सृंगार नवीना ॥
गुरुसिष वधिर अन्ध कर लेखा । एक न सुनहिं एक नहिं देखा ॥
हरइ सिष्यधन सोक न हरई । सो गुरु घोर नरक महँ परई ॥
मातु पिता वालकन्ह वोलावहिं । उदर भरइ सोइ धर्म सिखावहिं ॥

दो० । ब्रह्मज्ञान विनु नारि नर, कहहिं न दूसरि बात ।
कौड़ी लागि लोभवस, करहिं विप्र-गुरु-घात ॥
वादहिं सूद्र द्विजन्ह सन, हम तुम्ह ते कछु घाटि ।
जानइ ब्रह्म सो विप्रवर, आंखि देखावहिं डांटि ॥

चौपाई ।

परतिय लंपट कपट सयाने । मोह द्रोह ममता लपटाने ।

तेइ अभेद वादी ज्ञानी नर । देखेउँ मैं चरित्र कलिजुग कर ॥
आप गये अरु औरनि घालहिं । जो कहुं सतमारग प्रति पालहिं ॥
कल्प कल्प भरि एक एक नरका । परहिं जे दूखहिं स्रुति करि तरका ॥
जे वरनाधम तेलि कुम्हारा । स्वपच किरात कोल कलवारा ॥
नारि मुई घर सम्पति नासी । मूँड मुडाइ होहिं सन्यासी ॥
ते बिप्रन्ह सन पांव पुजावहिं । उभय लोक निज हाथ नसावहिं ॥
विप्र निरच्छर लोलुप कामी । निराचार सठ वृपली स्वामी ॥
सूद्र करहिं जप तप व्रत दाना । वैठि वरासन कहहिं पुराना ॥
सव नर कल्पित करहिं अचारा । जाइ न वरनि अनीति अपारा ॥

दो० । भये वरनसंकर सकल, भिन्न सेतु सव लोग ।
करहिं पाप पावहिं दुख, भय रुज सोक वियोग ॥
स्रुति संमत हरि-भक्त-पथ, संजुत विरतिं विवेक ।
तेहि न चलहिं नर मोहवस, कल्पहिं पंथ अनेक ॥

तोमर छन्द ।

वहु दाम सँवारहिं धाम जती । विपया हरि लीन गई वरती ॥
तपसी धनवंत दरिद्र गृही । कलि कौतुक तात न जात कही ॥
कुलवंत निकारहिं नारि सती । गृह आनहिं चेरि निवेरि गती ॥
सुत मानहिं मातु पिता तव लों । अवला नहिं डीठ परी जव लों ॥

ससुरारि पियारि लगी जब तें। रिपुरूप कुटुंब भये तब तें ॥
नृप पाप परायन धर्म नहीं। करि दंड विडंब प्रजा नितहीं ॥
धनवंत कुलीन मलीन अपी। द्विज चिन्ह जनेउ उघार तपी ॥
नहिं मान पुरानन्ह वेदहिं जो। हरि सेवक संत सही कलि सो ॥
कवि वृंद उदार दुनी न सुनी। गुन-दूषन-व्रात न कोपि गुनी ॥
कलि बारहिं बार दुकाल परै। बिनु अन्न दुखी सब लोग मरै ॥

दो०। सुनु खगेस कलि कपट हठ, दंभ द्वेष पाखंड।
मान मोह मारादि मद, व्यापि रहे ब्रह्मंड ॥
तापस धर्म करहिं सब, जप तप मख व्रत दान।
देव न बरषहिं धरनि पर, बये न जामहिं धान ॥

तोटक छन्द।

अबला कच भूषन भूरि छुधा। धन हीन दुखी ममता बहुधा ॥
सुख चाहहिं मूढ़ न धर्मरता। मति थोर कठोरि न कोमलता ॥
नर पीडित रोग न भोग कहीं। अभिमान विरोध अकारनहीं ॥
लघु जीवन संवत पंचदसा। कलपांत न नास गुमान असा ॥
कलि काल बिहाल किये मनुजा। नहिं मानत कोउ अनुजा तनुजा ॥
नहिं तोष विचार न सीतलता। सब जाति कुजाति भये मँगता ॥
इरषा परुषाच्छर लोलुपता। भरि पूरि रही समता विगता ॥

सव लोग बियोग विसोक हये । वरनास्रम धर्म विचार गये ॥
दम दान दया नहिं जानपनी । जड़ता पर-वंचनताति-घनी ॥
तन पोषक नारि नरा सगरे । पर निंदक ते जग मों बगरे ॥

दो० । सुनु व्यालारि कराल कलि, मल अवगुन आगार ।
गुनउ वहुत कलिजुग कर, विनु प्रयास निस्तार ॥
कृतजुग त्रेतां द्वापर, पूजा मख अरु जोग ।
जो गति होइ सो कलि हरि, नाम तें पावहिं लोग ॥

चौपाई ।

कृतजुग सव जोगी बिज्ञानी । करि हरि ध्यान तरहिं भव प्रानी ॥
त्रेता विविध जज्ञ नर करहीं । प्रभुहिं समर्पि करम भव तरहीं ॥
द्वापर करि रघुपति पद पूजा । नर भव तरहिं उपाउ न दूजा ॥
कलिजुग केवल हरि-गुन-गाहा । गावंत नर पावहिं भवथाहा ॥
कलिजुग जोग न जज्ञ न ज्ञाना । एक अधार रामगुन गाना ॥
सव भरोस तजि जो भज रामहिं । प्रेम समेत गाव गुन ग्रामहिं ॥
सोइ भवतर कछु संसय नाहीं । नाम प्रताप प्रगट कलि माहीं ॥
कलि कर एक पुनीत प्रतापा । मानस पुन्य होइ नहिं पापा ॥

दो० । कलिजुग सम जुग आन नहिं, जो नर कर विस्वास ।
गाइ रामगुनगन विमल, भव तर विनहिं प्रयास ॥
प्रगट चारि पद धर्म के, कलि महँ एक प्रधान ।

जेन केन विधि दीन्हे, दान करइ कल्यान ॥

चौपाई ।

नित जुग होहिं धर्म सव केरे । हृदय राम माया के प्रेरे ॥
सुद्ध सत्व समता विज्ञाना । कृत प्रभाव प्रसन्न मन जाना ॥
सत्व वहुत रज कछु रति कर्मा । सव विधि सुख त्रेता कर धर्मा ॥
वहु रज सत्व स्वल्प कछु तामस । द्वापर धर्म हरष भव मानस ॥
तामस वहुत रजोगुन थोरा । कलि प्रभाव विरोध चहुँ ओरा ॥
वुध जुग धर्म जानि मनमाहीं । तजि अधर्म रति धर्म कराहीं ॥
काल धर्म नहिं व्यापहिं तेही । रघुपति-चरन-प्रीति रति जेही ॥
नटकृत कपट विकट खगराया । नट सेवकहिं न व्यापइ माया ॥

दो०। हरि-माया-कृत दोष गुन, विनु हरि भजन न जाहिं ।
भजिय राम सव काम तजि, अस विचारि मन माहिं ॥
कलिमल शमन दमन मन, राम सुयश सुख मूल ।
सादर सुनहिं जे ताहि पर, राम रहहिं अनुकूल ॥

सो०। कठिन काल मल कोप, धर्म न ज्ञान न योग तप ।
परिहर सकल भरोस, राम भजहिं ते चतुर नर ॥

चौपाई ।

एहि कलिकाल न साधन दूजा । योग यज्ञ जप व्रत तप पूजा ॥

रामहिं सुमिरिय गाइय रामहिं । संतत सुनिय रामगुण ग्रामहिं ॥
जासु पतितपावन भगवाना । गावहिं कवि स्रुति सन्त पुराना ॥
जाहि भजिय तजि मन कुटिलाई । राम भजे गति केहि नहिं पाई ॥

छन्द ॥

पाई न गति केहि पतितपावन राम भजु सुनु शठ मना ।
गणिका अजामिल गृध्र व्याध गजादि खल तारेउ घना ॥
आभीर यवन किरात खल श्वपचादि अति अघरूप जे ।
कहि नाम बारक तेऽपि पावन होत राम नमामि ते ॥
सुंदर सुजान कृपानिधान अनाथ पर करु प्रीति जो ।
सो एक राम अकामहित निर्वाणप्रदसम आन को ॥
जाकी कृपा लवलेश तें मतिमन्द तुलसीदासहूं ।
पायो परम विश्राम राम समान प्रभु नाहीं कहूं ॥

दो० । मो सम दीन न दीनहित, तुम समान रघुवीर ।
अस विचारि रघुवंशमणि, हरहु विषम भवपीर ॥
कामिहिं नारि पियारि जिमि, लोभिहिं प्रिय जिमिदाम ।
तिमि रघुनाथ निरंतर, प्रिय लागहु मोहिं राम ॥

———:o:———

राम नाम माहात्म्य

चौपाई ।

वन्दौं राम नाम रघुवर के । हेतु कृशानु भानु हिमकर के ॥
विधि हरि हरमय वेद प्राण से । अगुण अनूपम गुणनिधानसे ॥
महामन्त्र जोइ जपत महेसू । काशी मुक्ति हेतु उपदेसू ॥
महिमा जासु जान गणराऊ । प्रथम पूजियत नाम प्रभाऊ ॥
जानि आदिकवि नाम प्रतापू । भयउ सिद्ध करि उलटा जापू ॥
सहसनामसम सुनि शिववानी । जपि जेईं पिय संग भवानी ॥
हर्षे हेतु हेरि हरही कौ । किय भूषण तिय भूषण तीकौ ॥
नाम प्रभाव जान शिव नीके । काल कूट फल दीन्ह अमीके ॥

दो०। वर्षाऋतु रघुपति भगति, तुलसी शालि सुदास ।
राम नाम वरवर्णयुग, श्रावण भादौं मास ॥

चौपाई ।

अक्षर मधुर मनोहर दोऊ । वर्ण विलोचन जनजिय जोऊ ॥
सुमिरत सुलभ सुखद सब काहू । लोक लाहु परलोक निवाहू ॥
कहत सुनत सुमिरत सुठि नीके । राम लषण सम प्रिय तुलसीके ॥
वर्णत वर्ण प्रीति विलगाती । ब्रह्म जीव सम सहज सँघाती ॥

नर नारायण सरिस सुभ्राता । जग पालक विशेषि जन त्राता ॥
भक्ति सुतिय कल करण विभूषण । जगहित हेतु विमल विधु पूषण ॥
स्वादु तोष सम सुगति सुधा के । कमठ शेषसम धर वसुधा के ॥
जनमन मंजु कंज मधुकर से । जीह जसोमति हरि हलधर से ॥

दो० । एक छत्र इक मुकुटमणि, सव वर्णन पर जोउ ।
तुलसी रघुवर नामके, वरण विराजत दोउ ॥

चौपाई ।

समुझत सरस नाम अरु नामी । प्रीति परस्पर प्रभु अनुगामी ॥
नाम रूप द्वौ ईश उपाधी । अकथ अनादि सुसामुझि साधी ॥
को वड़ छोट कहत अपराधू । सुनि गुण भेद समुझि हैं साधू ॥
देखिय रूप राम आधीना । रूप ज्ञान नहिं नाम विहीना ॥
रूप विशेष नाम विनु जाने । करतल गत न परहिं पहिंचाने ॥
सुमिरिय नाम रूप विनु देखे । आवत हृदय सनेह विशेखे ॥
नाम रूप गति अकथ कहानी । समुझत सुखद न परति वखानी ॥
अगुण सगुण विच नाम सुसाखी । उभय प्रवोधक चतुर दुभाखी ॥

दो० । राम नाम मणि दीप धरु, जीह देहरी द्वार ।
तुलसी भीतर वाहिरौ, जो चाहसि उजियार ॥

चौपाई ।

नाम जीहजपि जागहिं योगी । विरति विरंचि प्रपंच वियोगी ॥
ब्रह्मसुखहिं अनुभवहिं अनूपा । अकथ अनामय नाम न रूपा ॥
जाना चहहिं गूढ़ गति जेऊ । नाम जीह जपि जानहिं तेऊ ॥
साधक नाम जपहिं लयलाये । होहिं सिद्ध अणिमादिक पाये ॥
जपहिं नाम जन आरत भारी । मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी ॥
राम भक्त जग चारि प्रकारा । सुकृती चारिउ अनघ उदारा ॥
चहुं चतुरन कहँ नाम अधारा । ज्ञानी प्रभुहिं विशेष पियारा ॥
चहुँयुग चहुँश्रुति नाम प्रभाऊ । कलि विशेष नहिं आन उपाऊ ॥

दो० । सकल कामना हीन जे, राम भक्ति रस लीन ।
नाम सप्रेम पियूष ह्रद, तिनहु किये मनमीन ॥

चौपाई ।

अगुण सगुण दोउ ब्रह्मस्वरूपा । अकथ अगाध अनादि अनूपा ॥
मोरे मत वड़ नाम दुहूंते । किय जेहियुग निज वश निज बूते ॥
प्रौढ़ सुजनजन जानहिं जनकी । कहँउ प्रतीति प्रीति रुचिमनकी ॥
एक दारुगत देखिय एकू । पावक युगसम ब्रह्मविवेकू ॥
उभय अगम युग सुगम नामते । कहँउ नाम बड ब्रह्म राम ते ॥
व्यापक एक ब्रह्म अविनाशी । सत चेतन घन आनँद राशी ॥
अस प्रभु हृदय अछत अविकारी । सकलजीवजग दीन दुखारी ॥

नाम निरूपण नाम यतन तें । सो प्रगटत जिमि मोल रतनतें ॥
दो० । निर्गुण ते इहिं भांति बड़, नाम प्रभाव अपार ।
कहउँ नाम बड़ राम ते, निज बिचार अनुसार ॥

चौपाई ।

राम भक्तिहित नरतनु धारी । सहि संकट किय साधु सुखारी ॥
नाम सप्रेम जपत अनयासा । भक्त होहिं मुद मंगल वासा ॥
राम एक तापस तिय तारी । नाम कोटि खल कुमति सुधारी ॥
ऋषिहित राम सुकेतु सुता की । सहित सेन सुत कीन्ह बिबाकी ॥
सहित दोष दुख दास दुराशा । दलै नाम जिमि रविनिशि नाशा ॥
भंजेउ राम आप भवचापू । भवभय भंजन नाम प्रतापू ॥
दंडक वन प्रभु कीन्ह सुहावन । जनमन अमित नाम किय पावन ॥
निशिचर निकर दलेउ रघुनन्दन । नामसकल कलि कलुषनिकंदन ॥
दो० । शवरी गीध सुसेवकानि, सुगति दीन्ह रघुनाथ ।
नाम उधारे अमित खल, वेद विदित गुणगाथ ॥

चौपाई ।

राम सुकंठ विभीषण दोऊ । राखे शरण जान सब कोऊ ॥
नाम अनेक गरीब निवाजे । लोक वेद वर विरद बिराजे ॥
राम भालु कपि कटक बटोरा । सेतु हेतु श्रम कीन्ह न थोरा ॥

नाम लेत भवसिंधु सुखाहीं । करहु विचार सुजन मनमाहीं ॥
राम सकुल रण रावण मारा । सीय सहित निजपुर पग धारा ॥
राजा राम अवध रजधानी । गावत गुण सुर मुनि वर बानी ॥
सेवक सुमिरत नामसप्रीती । बिन श्रम प्रबल मोह दलजीती ॥
फिरत सनेह मगन सुख अपने । नाम प्रताप शोच नहिं सपने ॥

दो० । ब्रह्म राम ते नाम बड़, वरदायक वरदानि ।
रामचरित शतकोटिमहँ, लिय महेश जियजानि ॥

चौपाई ।

नाम प्रताप शंभु अविनाशी । साज अमंगल मंगलराशी ॥
शुक सनकादि सिद्ध मुनियोगी । नामप्रसाद ब्रह्म सुखभोगी ॥
नारद जानेउ नामप्रतापू । जगप्रिय हरिहर हरिप्रिय आपू ॥
नाम जपत प्रभुकीन्ह प्रसादू । भक्तशिरोमणि भे प्रह्लादू ॥
ध्रुव सगलानि जपेउ हरिनामू । पायउ अचल अनूपम ठामू ॥
सुमिरि पवन सुत पावन नामू । अपने वश करिराखेउ रामू ॥
अपर अजामिल गजगणिकाऊ । भए मुक्त हरिनाम प्रभाऊ ॥
कहउँ कहाँ लगि नाम बड़ाई । राम न सकहिं नाम गुणगाई ॥

दो० । रामनाम को कल्पतरु, कलि कल्याण निवास ।
जो सुमिरत भए भांगतें, तुलसी तुलसीदास ॥

चौपाई ।

चहुँयुग तीनकाल तिहुँलोका । भए नाम जपि जीव विशोका ॥
वेदपुराण सन्तमत एहू । सकल सुकृतफल रामसनेहू ॥
ध्यान प्रथम युग मख विधिदूजे । द्वापर परितोषत प्रभुपूजे ॥
कलि केवल मलमूल मलीना । पाप पयोनिधि जनमन मीना ॥
नाम कामतरु काल कराला । सुमिरत शमन सकल जगजाला ॥
रामनाम कलि अभिमत दाता । हित परलोक लोक पितुमाता ॥
नहिं कलिकर्म न भक्ति विवेकू । रामनाम अवलंबन एकू ॥
कालनेमि कलि कपट निधानू । राम सुमति समरथ हनुमानू ॥

दो० । रामनाम नरकेसरी, कनक कशिपु कलिकाल ।
जायकजन प्रहलाद जिमि, पालहिं दलि सुरसाल ॥

भाय कुभाय अनख आलसहूं । नाम जपत मंगल दिशि दशहूं ॥
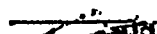
आरती श्रीरामायणजी की ।

—:※:—:※:—

आरति श्रीरामायण जीकी ।
कीरति कलित ललित सिय पीकी ॥ टेक ॥

गावत ब्रह्मादिक मुनि नारद । बालमीकि विज्ञान विशारद ॥
शुक सनकादि शेष अरु शारद । वरणि पवनसुत कीरति नीकी ॥१॥
संतत गावत शंभु भवानी । औ घटसंभव मुनिवर ज्ञानी ॥
व्यास आदि कवि पुंग बखानी । काग भुशुण्डि गरुड़ के हियकी ॥२॥
चारिउ वेद पुराण अष्टदश । छइउ शास्त्र सब ग्रन्थनि को रस ॥
तन मन धन संतन को सर्वस । सार अंश सम्मत सबही की ॥३॥
कलिमल हरणि विषयरस फीकी । सुभग शृंगार मुक्ति युवतीको ॥
हरणि रोग भवमूरि अमीकी । तात मात सब विधि तुलसी की ॥४॥

—:o:—
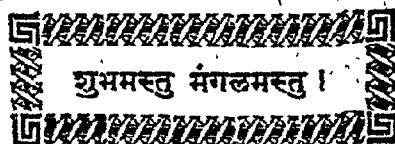
शुभमस्तु मंगलमस्तु ।

पुस्तक मिलने का पता—

पण्डित कन्हैयालाल

व पण्डित बलदेवसहाय

मुहल्ला गंगापुर

बाँसबरेली.

——:o:——